Con. 3. IX.18.49
320

अंक 9
संख्या 18

बृहस्पतिवार
25 अगस्त
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा—*(जारी)*
[नये अनुच्छेद 295-क पर विचार] 1029-1061

भारतीय संविधान सभा

बृहस्पतिवार, 25 अगस्त, सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान-सभा, कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 9 बजे, अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा—*(जारी)*

नया अनुच्छेद 295क—*(जारी)*

***अध्यक्षः** हम अनुच्छेद 295-क पर संशोधनों को लेंगे।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं सविनय निवेदन करता हूं:

"कि उपरोक्त संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 295-क के अन्त में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:-

'Provided the people for whom seats in the Legislatures have been reserved are brought to the level of other advanced classes of people educationally, socially and economically.' "

[पर जिन लोगों के लिये विधान-मंडल में स्थान रक्षित किये गये हैं, उन्हें शैक्षणिक, सामाजिक तथा आर्थिक रूप में अन्य उन्नत जनवर्गों के स्तर पर लाया जायेगा।]

इस संशोधन को पेश करने में मेरी मंशा रक्षण की कालावधि को बढ़ाने का नहीं है, पर मेरी यह मंशा है कि सरकार वास्तव में इस बात का ध्यान रखे कि 10 वर्ष की अवधि में वे लोग, जिनके लिये स्थान रक्षित किये गये हैं, अन्य उन्नत वर्गों के स्तर पर ले आये जायें। इस समय यह स्थिति है कि विविध प्रान्तों में हरिजन उद्धार के भार-साधक मंत्री हैं, पर केन्द्र में ऐसा कोई मंत्रालय नहीं है, और मैं सरकार से प्रार्थना करूंगा कि वह उस प्रकार का एक मंत्रालय बना दे और यह देखे कि उस मंत्रालय का भार-साधक एक हरिजन हो और दस वर्ष

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेज़ी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[श्री एस. नागप्पा]

के लिये एक योजना बनाई जाये, जिससे कि इन लोगों को शैक्षणिक, आर्थिक और सामाजिक रूप में अन्य उन्नत लोगों के स्तर पर ले आया जाये। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये, मैं केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना करूंगा कि वह अपने राजस्व का पांच प्रतिशत प्रांतीय सरकारों को अनुदान देने के लिये अलग रखे दे, जैसा कि वह ग्राम जल-योजना के मामले में अथवा ग्राम्य क्षेत्रों को चिकित्सा-सहायता के मामले में कर रही है। और भी, इन लोगों को अन्य लोगों के स्तर पर लाने के लिये हमारे पास कुछ सुनिश्चित योजनायें होनी चाहियें। जब तक ऐसी योजनायें बनकर क्रियान्वित नहीं होतीं, तब तक मैं नहीं समझता कि इन पददलित लोगों को दस वर्ष की छोटी सी कालावधि में अन्य उन्नत जातियों के स्तर पर लाना सम्भव हो सकेगा।

हरिजन आन्दोलन 1932 में हमारे सम्मान्य नेता महात्मा जी के आशीर्वाद तथा सक्रिय सहयोग से चला था इतने दिन तक हमने इसे चलाया और इसे हम जनता के सहयोग से और अनवरत प्रचार द्वारा चलाते रहे हैं, जिससे कि हरिजनों के साथ भी दूसरों के समान ही व्यवहार हो। निस्संदेह, श्रीमान, इससे उन लोगों के मस्तिष्क में मनोवैज्ञानिक परिवर्तन हो गया है, जो आधुनिक हैं, जो सभ्य हैं, जो शिक्षित हैं, जो बात को समझ सकते हैं, जो समय के साथ चल सकते हैं, पर इससे उन लोगों में कोई परिवर्तन नहीं हो सका है, जो शिक्षित नहीं हैं, जो अब भी रूढ़िवादी हैं, जो पुरानी बातों में विश्वास करते हैं, विशेषत: ग्रामों में रहने वाले लोगों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। मैं केन्द्रीय सरकार तथा प्रांतीय सरकारों के प्रति अवश्य कृतज्ञ हूं कि उन्होंने इस संविधान में एक अनुच्छेद रख दिया है तथा विविधि प्रांतों में समुचित विधान भी बनाये गये हैं जिससे कि अस्पृश्यता एक अपराध बन जाये, जिस पर पुलिस भी कार्यवाही कर सके, पर फिर भी मुझे पता लगा है कि इस पर उसी भावना से अमल नहीं होता, जिस भावना से कि यह बनाया गया है। श्रीमान, हलवे का आनन्द तो खाने में ही है। हमें ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि हम जो कुछ अधिनियम बनायें, इसका प्रत्येक शब्द, इसका प्रत्येक अक्षर, इसकी भावना सहित कार्य रूप में परिणित हो, शहरों में ही नहीं, नगरों में ही नहीं, वरन् गावों में भी। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिये केन्द्रीय राजस्व का कम से कम 5 प्रतिशत अलग रख दिया जाये; केन्द्र में इन लोगों का ध्यान रखने के लिये एक मंत्रालय हो, जो उस कार्य का विनियमन करे, जो प्रांतों और राज्यों में हो रहा है।

एक और चीज, जिससे बहुत हद तक ये लोग उन्नत वर्गों के स्तर तक लाये जा सकते हैं, शिक्षा है। इस समय हमारे देश में सबसे अधिक निरक्षरता है। आखिर साक्षर जनता 12 से 15 प्रतिशत तक हो सकती है। यदि आप केवल हरिजनों को लें, तो मेरे विचार में साक्षर जनता एक या दो प्रतिशत होगी। प्रतिवर्ष हमें यह देखना चाहिये कि कितने प्रतिशत लोग साक्षर बनाये गये और हमें शिक्षा प्रचार आंदोलन को बहुत प्रोत्साहन देना चाहिये। शिक्षा सर्वतोमुखी उन्नति की चाबी है।

जब तक वे शिक्षित नहीं होंगे, तब तक आप उन्हें अन्य उन्नत लोगों के स्तर पर शायद न ला सकें। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप इन लोगों के लिये प्राथमिक शिक्षा अनविार्य कर दें। मैं जानता हूं कि इस देश में बंजर भूमि बहुत पड़ी है, पर दुर्भाग्य से इन लोगों को उसके बोने की अनुमति नहीं मिलती। मैं सरकार से, विशेषत: कृषि तथा खाद्यान्न मंत्रालय से, प्रार्थना करता हूं कि वे एक सुनिश्चित योजना बनायें। उन्हें चाहिये कि वे इन लोगों को ये भूमियां बांटते जायें, जिससे कि अधिक अन्न उपजे और जिससे कि इन लोगों की आर्थिक स्थिति ऊंची हो।

इन लोगों का आर्थिक उत्थान करने के लिये समस्त देश में बहुधंधी सहकारी समितियों का संगठन करना चाहिये और आपको यह देखना चाहिये कि प्रत्येक समिति की एक सुनिश्चित योजना हो और वह देखे कि एक विशेष काल में एक विशेष कार्य हो जाये। हम देखते हैं कि श्रमिकों में हड़ताल करने की मनोवृत्ति फैल रही है। पूंजीपतियों में लाभाकांक्षा बढ़ती जाती है। श्रमिकों की हड़ताल करने की मनोवृत्ति तथा पूंजीपतियों में लाभाकांक्षा के परिणामस्वरूप देश को दु:ख भोगना पड़ रहा है, क्योंकि उत्पादन कम हो रहा है। मैं इसके लिये एक हल सुझाना चाहता हूं; कि श्रमिक को निर्मातृ का स्वामी बना दीजिये। आप पूछ सकते हैं, उसे स्वामी कैसे बनाया जाये? यह तो बहुत सरल बात है। उदाहरण के लिए आप यह मान लीजिये कि एक श्रमिक दो रुपये प्रति दिन कमाता है। मान लीजिये एक मिल में 40 लाख रुपये लगा हुआ है, उसमें 4,000 व्यक्ति काम कर रहे हैं। यदि आप प्रत्येक श्रमिक की कमाई में से दो आना प्रति रुपया काटना आरंभ कर दें, तो आप प्रतिदिन एक श्रमिक के नाम से चार आने बचायेंगे और 4,000 लोगों के लिये 1000 रुपये हो जायेंगे, कुछ समय में आप कारखाने में लगी हुई पूंजी एकत्र कर लेंगे। आप वह रुपया पूंजीपति को दे दीजिये और फिर श्रमिकों को कहिये, "लीजिये, आज से यह आपकी हुई; जाओ और जो मर्जी हो वही बनाओ।" पूंजीपति को उसका रुपये मिल जायेगा और वह उसे किसी और उद्योग में लगा सकता है। देश का औद्योगिक विकास हो जायेगा। मैं माननीय श्रम मंत्री से प्रार्थना करता हूं कि इसे ध्यान से सुनें और और देखें कि यह काम शीघ्र हो जाये। यदि माननीय श्रम मंत्री के दिमाग में यह बात समा जाये तो वे ऐसा कर सकते हैं और उत्पादन अब से कई गुना हो सकता है। यदि वे चाहें तो देश में कमी नहीं रहेगी। इस लाभांश वितरण योजना आदि से कोई लाभ नहीं है। आपको श्रमिक के दिल में यह भावना पैदा करनी होगी कि यह उसी का कारखाना है। यदि आप वह भावना उत्पन्न कर देंगे तो वह मन लगाकर काम करेगा। इतनी सी बात कहने से आपको 50 प्रतिशत लाभ होगा, बाकी व्यर्थ है।

***अध्यक्ष:** मुझे विश्वास है कि आप अच्छा सुझाव दे रहे हैं, जिस पर यथोचित विचार किया जायेगा। पर जहां तक इस अनुच्छेद का सम्बन्ध है, ये सुझाव अप्रासंगिक हैं।

श्री एस. नागप्पा: निस्संदेह, मेरे विचार में यही सर्वोत्तम उपाय है, जिससे कि हम इन लोगों की आर्थिक स्थिति को अन्य लोगों के स्तर पर ला सकते हैं।

[श्री एस. नागप्पा]

मेरा संशोधन है कि यह रक्षण दस वर्ष के लिये रहना चाहिये, यदि सरकार इस पर वास्तव में तुल जाये और देखे कि ये लोग उन्नत वर्गों के स्तर पर लाये जायें। मैं केवल शोर ही नहीं कर रहा हूं; मैं रचनात्मक सुझाव देना चाहता हूं और सुझाव देने के लिये ही मुझे ये बातें विस्तार से कहनी पड़ रही है। आपके पास एक सुनिश्चित योजना होनी चाहिये। आपको इस जाति से कम से कम 100 नवयुवक ले लेने चाहिये और उन्हें विशेषज्ञ प्रौद्योगिक बनाने के लिये विदेशों में भेजना चाहिये, जैसा कि वेविन योजना अथवा अन्य किसी योजना के अधीन किया गया था। आपको उन्हें विदेशों में भेजकर प्रौद्योगिक विशेषज्ञ बनाना चाहिये। प्रत्येक वर्ष के लिये एक सुनिश्चित संख्या या सुनिश्चित योजना होनी चाहिये। यह कहना कि सब कुछ हो जायेगा और सब बातों को अनिश्चित छोड़ देना व्यर्थ है। आपको एक सुनिश्चित योजना बनाकर कार्य आरंभ करना चाहिये। मुझे पता लगा है कि एक छात्रवृत्ति मंडल है; पर मुझे आश्चर्य हुआ कि उसे जो राशि दी गई है, वह बहुत सीमित है, यदि छात्रवृत्ति के लिये आवेदन-पत्रों की संख्या पर विचार किया जाता है। लगभग साठ-सत्तर प्रतिशत आवेदन-पत्रों को अस्वीकार करना पड़ा, क्योंकि उसके पास पर्याप्त कोष नहीं है। मैं सरकार से प्रार्थना करता हूं कि वह ऐसी व्यवस्था करे कि इस छात्रवृत्ति मंडल को जो भी आवेदन-पत्र भेजा आये, वह स्वीकृत हो जाये और जो विद्यार्थी सरकारी सहायता मांगे, उसे वह मिल जाये तथा वह भी समय पर और उसे सरकार की सद्भावना से अपनी योग्यतानुसार सर्वोत्तम लाभ उठाने का अवसर मिलना चाहिये।

जब वे सब आवश्यक अर्हताओं से सम्पन्न हैं, तब भी उनके लिये उत्तरदायी स्थानों में नियुक्त होना एक समस्या है, क्योंकि उन्हें बहुत सी कठिनाइयों को पार करना होता है। लोक सेवा आयोग भी इन लोगों के मार्ग में रोड़ा ही है। इन लोगों के हितों का संरक्षण करने के लिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक प्रान्तीय सेवा आयोग में कम से कम एक सदस्य इन लोगों का होना चाहिये। केन्द्रीय आयोग में भी एक व्यक्ति होना चाहिये। केवल तभी ये लोग आगे बढ़ सकेंगे।

दूसरी बहुत महत्वपूर्ण बात यह है कि ये लोग सैनिक कार्य के लिये बहुत दक्ष हाते हैं। वे बहुत साहसी होते हैं; वे कितना ही शारीरिक परिश्रम कर सकते हैं। इन लोगों को सेना में बहुत बड़ी संख्या में भरती किया जाना चाहिये—केवल सिपाहियों के रूप में ही नहीं, वरन् उत्तरदायी पदों पर भी नियुक्त करना चाहिये। पांच वर्षों के अन्त में आपको एक आयोग नियुक्त करना चाहिये जो देश में भ्रमण करे तथा विचार करना चाहिये कि इन लोगों ने पांच वर्षों में क्या उन्नति की है और क्या वह उन्नति हमारी योजना के अनुरूप है और यदि प्रगति पर्याप्त नहीं हुई है, तो आगे बढ़ने के लिये और क्या सुझाव दिये जा सकते हैं।

दूसरी अत्यन्त महत्वपूर्ण बात यह है। संविधान में हमने यह उपबन्ध किया है कि सबको जाति, विचार तथा रंग धर्म अथवा मलवंश, को ध्यान में न रखते

हुए समान अवसर दिया जाना चाहिये। यह बहुत अच्छा दिखाई देता है, जहां तक पढ़ने का सम्बन्ध है। पर हमें देखना चाहिये कि इसे कार्य रूप में परिणत किया जाये। राज्यपालों, राजदूतों, उच्चायुक्तों, वाणिज्य आयुक्तों आदि कुछ पदों पर नियुक्तियां करते समय आपको इन लोगों के दावों का ध्यान रखना चाहिये। हम दो वर्षों से स्वतंत्र देश हैं, पर मुझे यह देखकर आश्यर्च है कि इन लोगों में से एक भी राज्यपाल नहीं है, एक भी राजदूत नहीं है।

***सरदार हुकम सिंह** (पूर्वी पंजाबः सिख): एक औचित्य प्रश्न है, श्रीमान। अब रंग पर क्यों जोर दिया जाता है? क्योंकि सारे भारतीय एक ही रंग के हैं।

***श्री एस. नागप्पाः** जहां तक मेरे उत्तर के माननीय मित्रों का सम्बन्ध है, उनका एक रंग हो सकता है, किन्तु हमारा दाक्षिणात्यों का, जो कि भूमध्यदेखा के निकट हैं, अलग रंग है। चाहे उनका रंग काला हो चाहे भूरा। चाहे कोई भी रंग हो, हम भारतीय हैं। आपने यह अच्छा विधान बनाया है कि हम सबको समान अवसर देंगे। इस पर उसी भावना से कार्य करना चाहिये। क्या आप बता सकते हैं कि इस देश में कोई भी परिगणित जाति का व्यक्ति राज्यपाल है? आप तो कटे पर नमक छिड़क रहे हैं। आपने इन लोगों को क्या अवसर दिये हैं? क्या आप कह सकते हैं कि आपने जिन्हें मंत्रिमंडल से सदस्य या अन्य अधिकारी चुना है, वे असफल रहे हैं? वे दूसरों से अधिक कार्य कर रहे हैं। आप उन्हें अकुशल क्यों बताते हैं? आप किसी न किसी प्रकार हमारे दावों को ठुकराना चाहते हैं। आगे से यह बात मत कहिये। कम से कम समय में ग्राम्य जनता को उच्च आर्थिक स्तर पर लाने का सर्वोत्तम तरीका यह है कि आप उन्हें भूमि दीजिये ओर नियन्त्रित वस्तुओं के अनुज्ञापत्र दीजिये और उन्हें ऐसे देशों में भेजिये, जो वाणिज्य में प्रगतिशील हैं।

दूसरी बात यह है कि आप देश भर में जमीदारी प्रथा को समाप्त कर रहे हैं। यह प्रगति का अच्छा प्रतीक है, पर होगा क्या? यदि जमीदारों को हटा दिया गया, तो छोटे जमीदार पैदा हो जायेंगे अर्थात् वे लोग जिन्हें कृषक समझा जाता है। वे भी भूमि को नहीं जोतते, और जोतता है मजदूर ही। आप उन्हें भूमि का स्वामी बना दीजिये, इन लोगों को भूमि दे दीजिये या सहकारी समितियों को दे दीजिये और उन्हें सरकारी ऋण दीजिये और भूमि बोने के लिये आधुनिक कलें कीजिये.....

***श्री एल. कृष्णस्वामी भारती** (मद्रासः जनरल): यह प्रासंगिक है?

***श्री एस. नागप्पाः** यह हरिजनों के उद्धार के लिये प्रसंगानुकूल है। अतः मैं सरकार से प्रार्थना करूंगा कि वे ध्यान रखें कि हम रक्षण के लिये सहमत हुए हैं.....

***एक माननीय सदस्यः** सरकार तो कोई नहीं है।

***श्री एस. नागप्पा:** मैं भावी सरकारों को सुझाव दे रहा हूं कि वे अपना काम कैसे चलायें। हम अपनी भावी सरकार के लिये संविधान बना रहे हैं। इसमें यही आशय निहित है। अत: मैं यह प्रार्थना करता हूं कि माननीय सदस्य कृपया मेरे संशोधन को स्वीकार कर लें। आपको अब यह समझ लेना चाहिये कि अब आपके कंधों पर अधिक उत्तरदायित्व है। आपको हमें ऐसे स्तर पर लाना है कि हम यह कह सकें कि हमें रक्षणों की आवश्यकता नहीं है। हम दया की भिक्षा नहीं मांग सकते। इस समय स्थिति यह है कि हम सरकार से प्रतिज्ञा करवा रहे हैं कि वह इस देश तथा इस जाति का भविष्य में उत्थान करेगी। मैं माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि वे इस संशोधन को स्वीकार कर लें। मैं विशेषत: डॉ. अम्बेडकर से, जो कि इसी जाति के हैं, इसे स्वीकार करने की प्रार्थना करता हूं। श्रीमान, मैं आपका अत्यन्त आभारी हूं।

(संशोधन संख्या 98 पेश नहीं किया गया।)

***श्री बी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

> "संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 295-क में 'ten years' इन शब्दों के पश्चात् 'or longer period if the Parliament so decides at a later date' ये शब्द प्रविष्ट कर दिये जायें।"

मेरे मित्र श्री नागप्पा ने अपना संशोधन पेश करते हुए सदन को यह बताया कि अनुसूचित जातियों को आज किन कठिनाइयों के अधीन काम करना पड़ रहा है। अब मेरा ख्याल यह है, अपितु सदन से मेरी प्रार्थना यह है कि परामर्श-समिति के प्रतिवेदन के आधार पर दस वर्ष की जो कालावधि रखी है वह कम है। अनुच्छेद 299 से स्पष्ट है कि मस्विदा समिति ने एक अनुच्छेद रखा है, जिसमें साफ लिखा है कि:

> "अल्पसंख्यकों के लिये इस संविधान के अधीन उपबन्धित परित्राणों से सम्बद्ध सब विषयों का अनुसन्धान करना तथा उन परित्राणों पर कार्य होने के सम्बन्ध में ऐसी अन्तराविधियों में, जैसी कि राष्ट्रपति निर्दिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देना विशेष पदाधिकारी का कर्तव्य होगा तथा राष्ट्रपति ऐसे सब प्रतिवेदनों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवायेगा।"

इस खंड के अंतर्गत मैं अनुभव करता हूं कि यह अच्छा होगा, यदि सदन दस वर्ष की अवधि को बढ़ा दे, जब तक कि विशेष पदाधिकारी अल्पसंख्यकों सम्बन्धी मामलों का अनुसंधान न कर ले और राष्ट्रपति को प्रतिवेदन न दे ले। इस अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति को यह मामला संसद के समक्ष रखना होगा। मैं यही चाहता हूं कि दस वर्ष के पश्चात् विशेष पदाधिकारियों का प्रतिवेदन राष्ट्रपति के समक्ष पेश हो और वह उसे संसद के समक्ष पेश करे। संसद सब मामले

पर विचार करके देख लेगी कि क्या अनुसूचित जातियां इतनी उन्नति कर चुकी हैं कि रक्षण हटा दिया जाये। मेरे विचार में यह सदन दस वर्ष की अवधि स्वीकार कर लेगा तो यह उल्टी गंगा बहाना होगा। हमें पता नहीं है कि इस दस वर्ष की अवधि के पश्चात् अनुसूचित जातियों की क्या स्थिति होगी। यदि वे असली उन्नति कर जायें, यदि वे सब प्रकार से प्रगति कर लें, तो हमें आगे कुछ करने की आवश्यकता नहीं है, उस अवधि के अंत में रक्षण समाप्त हो सकता है। किन्तु यदि उनकी स्थिति अब के समान ही रहे, या और भी बिगड़ जाये, या वे हमारी आशा से कम प्रगति कर सकें, तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि इस अवधि को ओर भी लम्बा किया जाये।

श्रीमान, मैं और भी कई कारणों द्वारा यह दिखा सकता हूं कि इस अवधि को क्यों बढ़ाना चाहिये। हमें स्मरण है कि 1947 में, जबकि परामर्शदात्री समिति का प्रतिवेदन इस सदन में विचार तथा विनिश्चय के लिये आया, तब उसमें कई सिफारिशें की गई थीं। मेरे ख्याल में केन्द्र की भारत सरकार ने या प्रांतीय सरकारों ने उस वाद-विवाद से कुछ नहीं सीखा है, जो यहां उन सिफारिशों पर हुआ था और उन्होंने अनुसूचित जातियों की स्थिति सुधारने के लिये अधिक कुछ नहीं किया है। संविधान सभा (विधायिनी) में भी एक संकल्प पारित हुआ था और अनुसूचित जातियों के प्रति सहानुभूति रखने वाले सब सदस्यों ने उस संकल्प सम्बन्धी वाद-विवाद में भाग लिया था और अंत में आश्वासन दिया गया था कि अनुसूचित जातियों के उत्थान के लिये सब कुछ किया जायेगा। क्या मैं जान सकता हूं कि क्या कदम उठाये गये हैं? मैं जानता हूं, सच तो यह है कि केवल यू.पी. में ही, और उससे कुछ कम मद्रास में अनुसूचित जातियों के उत्थान के लिये कुछ कार्यवाही की गई है। मद्रास ने एक समिति नियुक्त की और दो वर्ष के परिश्रम के पश्चात्, और विधान-मंडल में इस विषय पर बहस के पश्चात् अभी ही, सरकार ने एक हरिजन उत्थान विभाग आरम्भ किया है और उस विभाग ने इसी वर्ष, थोड़े से रुपये से कार्यारम्भ किया है।

मेरी तो यह प्रार्थना है कि यदि यह सरकार या यह सदन केवल दस ही वर्ष के लिये यह रक्षण रखना चाहता है कि उन्हें हरिजन उद्धार के लिये एक क्रियात्मक योजना बनानी चाहिये, और इस सम्बन्ध में मेरे विचार में यह कुछ अनुचित नहीं होगा, यदि मैं भारत सरकार को यह सुझाव दूं कि उन्हें हरिजन उद्धार के लिये एक पृथक मंत्री और पृथक विभाग बनाना चाहिये, जैसा कि मद्रास प्रान्त में किया गया है। यदि यही नहीं किया जाता और यदि सरकार दिलचस्पी लेकर हरिजनों को यह नहीं दिखाती कि अगले दस वर्षों में उनकी स्थिति निश्चय से सुधर जायेगी, तो इस दस वर्ष की अवधि को स्वीकार करने से अभी कोई लाभ नहीं है। इस सदन में समस्त स्थिति पर विचार करना तथा पहले स्वीकार की कई बातों को बदलना संभव हो सका है, अतः यह गलत बात नहीं होगी यदि, यह सदन हमारी बात सुनकर यह निश्चय कर दे कि इस दस वर्ष की अवधि को बढ़ा दिया जायेगा

[श्री बी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले]

जैसा कि मेरे संशोधन में लिखा है। इन थोड़े से शब्दों के साथ में माननीय डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव का समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** डॉक्टर मनमोहन दास।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल: मुस्लिम): एक संशोधन संख्या 105 है।

***अध्यक्ष:** हां, पर हम अभी संख्या 100 पर हैं। हम उसके बाद 105 पर आयेंगे।

***डॉ. मनमोहन दास** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में, प्रस्थापित नये अनुच्छेद 295-क के अंत में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:-

'unless Parliament by law otherwise provides'."

यदि मेरे संशोधन को स्वीकार कर लिया जाये, तो नया प्रस्थापित अनुच्छेद इस प्रकार बन जायेगा:—

"Notwithstanding anything contained in the foregoing provisions of this part, the provisions of this constitution relating to the reservation of seats for the Scheduled Castes and the Scheduled Tribes either in the House of the People or in the Legislative Assembly of a State shall cease to have effect on the expiration of a period of ten years from the commencement of this constitution, unless Parliament by law otherwise provides."

[इस भाग के पूर्ववर्ती उपबन्धों में किसी बात के होते हुए भी लोक सभा में और राज्यों की विधान-सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये स्थानों के रक्षण सम्बन्धी इस संविधान के उपबन्ध, इस संविधान के प्रारम्भ से दस वर्ष की कालावधि की समाप्ति पर प्रभावी न रहेंगे, जब तक कि संसद विधि द्वारा अन्यथा उपबन्ध न करे।]

डॉ. अम्बेडकर के प्रस्थापित नये अनुच्छेद में लिखा है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों को जो परित्राण दिये गये हैं, वे दस वर्षों की समाप्ति

पर समाप्त हो जायेंगे। किन्तु मेरे संशोधन में यह प्रस्थापना है कि ये सब परित्राण दस वर्ष के अन्त में समाप्त हो जायेंगे। किन्तु यदि संसद, उस समय अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों की स्थिति पर विचार करके यह समझे कि स्थान-रक्षण के ये उपबन्ध कुछ और समय के लिये रहने चाहियें, तो ये स्थानरक्षण, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों को दिये गये ये राजनैतिक विशेषाधिकार, जारी रहेंगे और समाप्त नहीं होंगे।

किसी व्यक्ति के लिये यह सुखद बात नहीं है कि वह अपने साथियों तथा मित्रों के समक्ष खड़ा होकर अपने तथा अपनी जाति के लिये रियायतों की भीख मांगे, विशेषत: जबकि वह जानता हो कि सदन में बहुमत ऐसी रियायतें देने के पक्ष में नहीं है, विशेषत: जब वह जानता हो कि पद-दलित जाति के लिये रियायतें पाने के उसके प्रयत्नों पर निश्चय ही अकृपापूर्ण, अमैत्रीपूर्ण और असहानुभूतिपूर्ण आलोचनाएं होंगी। पर इतना सब कुछ होते हुए भी जब मैं इस अनुच्छेद की महानता और महत्व पर विचार करता हूं, जब मैं यह विचार करता हूं कि इस अनुच्छेद का अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जातियों के करोड़ों लोगों के भावी राजनैतिक जीवन पर कितना प्रभाव पड़ेगा, तो मैं सोचता हूं कि यदि मैं उन लोगों की शिकायतें आपके समक्ष पेश न करूं, जिनके प्रतिनिधित्व करने का मैं दावा करता हूं, तो मैं उन लोगों के प्रति अपने कर्तव्य में असफल हूंगा।

श्रीमान, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों की समस्या कोई नई नहीं है। अंग्रेज शासकों ने अपने शासन के उत्तर भाग में इस समस्या को मान्यता दी थी और इसके लिये कुछ उपबन्ध किये थे। यह सत्य है कि उन्होंने वे उपबन्ध इसलिये नहीं बनाये कि उन्हें अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों से कोई सच्चा प्रेम था, या उन वर्गों का कल्याण चाहते थे, वरन् उन्होंने ये उपबन्ध इसलिये बनाये कि उन्हें उनसे स्वयं कुछ लाभों की आशा थी। भारतीय राष्ट्र सभा ने गांधी जी के कहने पर इस समस्या को पहचाना। महात्मा जी ने देखा कि इस देश में करोड़ों व्यक्ति हजारों वर्षों से अमानुषिक उत्पीड़न के शिकार हैं। यह मनुष्य और मनुष्य के बीच का भेद, यह श्रेणी विभेद महात्मा गांधी के ध्यान से बच नहीं सका। मानवता को दास बनाने की बृहद् व्यवस्था महात्मा जी की आंख से न बच सकी, और उन्होंने भारत के लोगों को कह दिया कि इस देश का विदेशी जूए से निर्वाण इस देश की करोड़ों पद-दलित अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये केवल हास्यास्पद होगा, यदि हम मानवता को दास बनाने वाली इस वृहद् व्यवस्था को समाप्त नहीं कर पाते।

श्रीमान, जब तक महात्मा जी जीवित थे, हम लोगों, हम इस देश के पीड़ित और पद दलित लोगों के लिये वे ऐसे न्यायालय थे जहां हमारी सुनवाई हो जाती थी, केवल हमारी ही नहीं, जो भी पीड़ित या पद-दलित होता था, उसकी उनके पास सुनवाई हो सकती थी। अब भी हम समझते थे कि हमारे साथ कोई अन्याय

[डॉ. मनमोहन दास]

हुआ है, तो हम जानते थे कि यदि हम उनके पास पहुंच सकते, तो हमें न्याय ही नहीं न्याय से अधिक कुछ प्राप्त हो सकता था। हम जानते थे कि यदि हम उन्हें अपने मामले के औचित्य का विश्वास दिला सकते थे, तो हम केवल अपना हक्क ही नहीं, अपितु उससे अधिक भी कुछ पा जायेंगे। श्रीमान्, अब वह सुनवाई का न्यायालय हमारे पास नहीं रहा, और हमारा दुर्भाग्य है कि आज हम देखते हैं कि इनके जाने के पश्चात् इस देश में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के प्रति लोगों का रुख शनैः शनैः कठोर होता जा रहा है। जब तक वे हमारे बीच में थे, तब तक हमें अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के साथ कुछ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार होता था, किन्तु उनके स्वर्गवास के बाद, हम देखते हैं कि हम प्रतिद्वन्द्वी, राजनैतिक विरोधी, भागीदार, हिस्सा बटाने वाले समझे जाते हैं।

अल्पसंख्यकों सम्बन्धी परामर्शदात्री समिति ने अपने 8 अगस्त, 1947 के प्रतिवेदन में स्पष्ट कहा था कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये दस वर्ष के लिये स्थान रक्षण होगा। दस वर्ष के पश्चात् इस अवस्था पर पुनः विचार किया जायेगा। इस सूत्र को संविधान सभा ने अगस्त, 1947 के सत्र में स्वीकार कर लिया था। पर अपनी बाद की एक बैठक में 11 मई, 1949 को अल्पसंख्यकों सम्बन्धी परमर्शदात्री समिति ने अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के अतिरिक्त अन्य अल्पसंख्यकों का स्थान रक्षण समाप्त कर दिया। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये स्थान-रक्षण मौलिक विनिश्चय के अनुसार दस वर्ष के लिये रखा गया है, किन्तु दस वर्षों के अंत में समस्या पर पुनर्विचार के विषय में कुछ नहीं कहा गया। मैं इन शब्दों पर बल देना चाहता हूं कि दस वर्षों के अंत में इस समस्या के पुनर्विचार के प्रश्न के विषय में कुछ नहीं कहा गया। इस समस्या पर पुनर्विचार के विषय में अल्पसंख्यक परामर्श-समिति की मौनता का अर्थ यह लगाया गया है कि परामर्श-समिति दस वर्ष के अंत में पुनर्विचार के विरुद्ध है। अल्पसंख्यक समिति ने अपने प्रतिवेदन में कहा है कि उन्होंने अनुसूचित जातियों और आदिम-जातियों को यह राजनैतिक रियायत इसलिये दी है कि "अनुसूचित जातियों की शिक्षा और लौकिक कल्याण का स्तर भारतीय मापदंड से भी बहुत निम्न है और इसके अतिरिक्त वे (अनुसूचित जातियां) गंभीर समाजिक निर्योग्यताओं से पीड़ित हैं"। अतः अल्पसंख्यक समिति के प्रतिवेदन से यह स्पष्ट है कि उनकी अत्यन्त निम्न शैक्षणिक तथा आर्थिक दशा और गम्भीर सामाजिक निर्योग्यताओं के कारण ही अनुसूचित जातियों को स्थान-रक्षण का राजनैतिक परित्राण प्रदान किया गया है।

अब मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से पूछता हूं, क्या उन्हें विश्वास है कि आगामी दस वर्षों में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों की

आर्थिक और शैक्षणिक दशा इतनी सुधर जायेगी कि उन जातियों के लिये इन राजनैतिक परित्राणों की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी; मैं अपने माननीय मित्रों से पूछता हूं, क्या उन्हें वास्तव में यह विश्वास है कि जिन गम्भीर सामाजिक निर्योग्यताओं से ये जनवर्ग हजारों वर्षों से पीड़ित हैं, वे आगामी दस वर्षों में समाप्त हो जायेंगी? मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से पूछता हूं, क्या वे हमें इस बात की प्रत्याभूति देने के लिये तैयार हैं?

हमारे सम्मानित मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने कल के अधिवेशन में एक बहुत उचित प्रश्न उठाया था। मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों की करुणाजनक अवस्था पर बहुत अश्रुपात किया है। किन्तु वे यह नहीं समझ सके कि इस स्थान रक्षण से इन वर्गों की अवस्था के सुधार में क्या उन्नति होगी। उन्होंने कहा कि इससे इन वर्गों का शोषण होगा और इससे उनमें फूट फैलेगी। यदि 'शोषण' से उनका आशय आर्थिक शोषण है, तो मैं समझ नहीं पाता कि केन्द्रीय विधान-मंडल में या प्रान्तीय विधान-मंडल में कुछ स्थानों से अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों का शोषण कैसे होगा। यदि शोषण से उनका आशय है, राजनैतिक शोषण, तो मैं उन्हें स्मरण कराना चाहता हूं कि जो भी नेता हमारी भावनाओं तथा तर्क को उभारने की अधिक क्षमता रखता है, वह हमारा अधिक शोषण कर सकता है। इस सदन के सदस्यों को यह अच्छी तरह विदित है कि डॉक्टर अम्बेडकर या प्रधान मंत्री की विश्वासजनक युक्तियों से हमें अपने विनिश्चय बदलने के लिये बाध्य होना पड़ा है। अत: यदि 'शोषण' से उनका अर्थ है कि राजनैतिक नेता इन अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों को अपने प्रभाव में ले आयेंगे, तो मैं उनसे कहता हूं कि ऐसा तो प्रत्येक स्थान पर होता है।

फूट फैलने की संभावना पर हम सब जानते हैं कि सौ निरक्षर लोग किसी विनिश्चय पर सौ शिक्षित, सुसंस्कृत मनुष्यों से अधिक शीघ्र पहुंच सकते हैं। यह तो विद्यमान समय में सुविदित है कि पिता, माता तथा दो पुत्रों के किसी परिवार में पिता कांग्रेसी है, माता हिन्दू महासभाई है, ज्येष्ठ पुत्र समाजवादी है और कनिष्ठ पुत्र है साम्यवादी, अत: शिक्षित तथा सुसंस्कृत वर्गों में इन लोगों से अधिक फूट की मनोवृत्ति होती है।

अब मैं इस प्रश्न पर आता हूं कि स्थान-रक्षण हमारी कठिनाइयों को दूर करने में कितना लाभदायक सिद्ध होगा? प्राचीन स्वर्ण-काल में जब सभ्यता इतनी उन्नत नहीं थी, जितनी अब है। तब शारीरिक शक्ति ही जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा और अत्याचार तथा अन्याय की रक्षा का एकमात्र प्रभावी शस्त्र था। सभ्यता की प्रगति तथा आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों तथा शस्त्रों की प्रगति से हम देखते हैं कि शारीरिक शक्ति से ये काम सिद्ध नहीं होते। राजनैतिक शक्ति, राजनैतिक बल, देश के प्रशासन में भाग, अपने राज्य के प्रशासन में आपका प्रभाव, आपकी आवाज,

[डॉ. मनमोहन दास]

ये वस्तुएं हैं जिनसे आप अपने जीवन तथा सम्पत्ति की रक्षा कर सकते हैं तथा अत्याचार और अन्याय से अपनी रक्षा कर सकते हैं। अत: मेरे विचार में मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद द्वारा अभिव्यक्ति विचार सत्य के सर्वथा विपरीत है।

मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूं, आप अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये केन्द्रीय अथवा प्रांतीय विधान मंडल में कुछ स्थान देने पर क्यों आपत्ति करते हैं? इस तीन सौ सदस्यों के सदन में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के अधिकाधिक तीस चालीस सदस्य हो सकते हैं। उन्होंने आपका क्या बिगाड़ा है—आपके लिये क्या कठिनाई पैदा की है? वे केवल यहां आते हैं और सदन की कार्यवाही को देखते रहते हैं, कार्यवाही में लगभग कोई भाग नहीं लेते, जब तक कि इस सदन के विनिश्चयों द्वारा उनके अपने हितों का हनन न हो। में आपसे अनुरोध करता हूं कि इन सदस्यों पर विश्वास कीजिये फिर आप देखेंगे कि वे आपके हाथों को सुदृढ़ बनायेंगे, निर्बल नहीं। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि उन्हें अपना छोटा भाई समझिये और आप देखेंगे कि वे आपके साथ हैं और आपके विरुद्ध नहीं हैं।

मेरे संशोधन में यह प्रस्थापना है कि इस स्थिति पर दस वर्ष के पश्चात् पुनर्विचार यिका जाये। यदि दस वर्ष के अंत में यह पता लगता है कि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों की दशा इतनी बदल गई है कि कोई परित्राण अपेक्षित नहीं है, तो संसद उन्हें हटा सकती है। मैं समझ नहीं पाता कि इतनी जल्दी क्या है, इतनी अशिष्ट शीघ्रता क्या है कि दस वर्ष के अंत में समस्या के पुनर्विचार कर द्वार भी बंद कर दिया जाये। भविष्य को अपना मार्ग स्वयं बनाने दीजिये। आखिर बहुसंख्यक जाति के लिये डरने की क्या बात है? आज आपका अत्यधिक बहुमत है, वह कल भी रहेगा और परसों भी रहेगा और सदा रहेगा। चाहे शासन का कोई रूप हो, चाहे कोई राजनैतिक दल सत्तारूढ़ हो जाये, बहुसंख्यक तो बहुसंख्यक ही रहेंगे और अल्पसंख्यक सदा उनके पैरों तले रहेंगे, उसकी दया पर निर्भर रहेंगे। अत: अनुसूचित जातियों से डरने की क्या बात है?

परामर्शदात्री समिति ने प्रतिवेदन में यह लिखा है कि "समिति सदा यही चाहती रही है कि अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों को विचार करने के लिये पर्याप्त समय मिलना चाहिये, जिससे कि जो भी परिवर्तन किया जाये, वह स्वयं अल्पसंख्यकों की इच्छा से ही हो और उन पर बहुसंख्यक सम्प्रदाय की ओर से थोपा न जाये। यदि यह आत है, यदि अल्पसंख्यक परामर्शदात्री समिति का यह दृष्टिकोण है, तो यह विचार करने का उपबन्ध अनुसूचित-जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के प्रतिनिधियों की इच्छा के बिना क्यों हटाया जाता है? मुझे विश्वास है कि इस सदन में अनुसूचित जातियों या अनुसूचित आदिम-जातियों का कोई भी सदस्य नहीं है, जो इस उपबन्ध को हटाने की प्रस्थापना पर अनुमति दे दे कि उनके प्रश्न पर दस वर्ष उपरान्त पुनर्विचार किया जायेगा।

श्रीमान, मेरा ख्याल है कि इस मामले में न्याय नहीं हुआ है और बहुसंख्यकों की इच्छा हम—अल्पसंख्यकों पर—हमारी इच्छा के विरुद्ध थोपी जा रही है। अतः मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से अनुरोध करता हूं कि सदन को मेरा संशोधन स्वीकार कर लेना चाहिये, जिसका उद्देश्य यह है कि दस वर्ष के अन्त में समूचे प्रश्न पर पुनर्विचार किया जाये, जो कि किसी भी प्रकार परामर्शदात्री समिति के विनिश्चय के विरुद्ध नहीं है।

***अध्यक्षः** संख्या 105, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद!

***श्री नजीरुद्दीन अहमदः** अध्यक्ष महोदय, मैं सविनय निवेदन करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 295-क के अंत में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:-

'and a general election shall be held thereafter.' "

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस अनुच्छेद में कुछ अस्पष्टता है। अनुच्छेद में लिखा है कि केन्द्र में लोक सभा में तथा राज्यों में प्रथम सदनों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के लिये स्थान-रक्षण इस संविधान में आरम्भ से दस वर्ष की समाप्ति पर प्रभावी नहीं रहेगा। मेरे विचार में इस पदावलि में कुछ अस्पष्टता बाकी है, यद्यपि विचार सर्वथा स्पष्ट है। मैं एक प्रश्न पेश करता हूं, जिस पर विचार करना चाहिये। अगले निर्वाचन में मेरा विश्वास है.....

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रासः जनरल): अध्यक्ष महोदय, यदि इससे मेरे मित्र की वक्तृता को कम करने में सहायता मिले, तो क्या मैं यह कह सकता हूं कि मस्विदा समिति का एक संशोधन है, जो कि उस आकस्मिकता में ठीक बैठ जायेगा, जिसकी उन्होंने कल्पना की है?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** वह संशोधन कहां है?

***अध्यक्षः** मैं संशोधन संख्या 114 की ओर संकेत कर रहा था, जिसमें माननीय सदस्य द्वारा उठाया गया प्रश्न आ जाता है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यह बात मेरे संशोधन से ली गई होगी या चुराई गई होगी। मैं इसके लिये अनुगृहीत हूं—यह मेरी महान स्तुति है।

मेरा कहना यह है कि इस संविधान के आरंभ में दस वर्ष की समाप्ति तथा लोक सभा या राज्यों की सभाओं की समाप्ति शायद एक साथ न हो। हो सकता है कि विविध कारणों से दूसरा निर्वाचन संविधान के पारित होने के नौवें वर्ष में हो। तत्पश्चात् दस वर्षों के पूरा होने में एक ही वर्ष बच जायेगा, पर विधान मंडल का समाप्ति में चार वर्ष शेष रहेंगे। अस्पष्टता यह है कि दस वर्षों की समाप्ति पर सभाओं की अवधि शायद समाप्त न हुई हो। प्रश्न यह है कि क्या दस वर्ष

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

की समाप्ति पर निर्वाचित विधान-मंडल बिल्कुल कृत्य बंद कर देगा और नया चुनाव हो जायेगा या और चुनाव न होकर वही निर्वाचित निकाय अपने जीवन के शेष समय तक रहेगा। इसी अस्पष्टता को मिटाने के लिये मैंने यह संशोधन भेजा था। पर मुझे प्रसन्नता है कि इस गलती पर ध्यान दिया गया है। मस्विदा समिति के साथ यह कठिनाई है कि यद्यपि कुछ मामलों में वे अच्छे विचारों को स्वीकार करने के लिये तैयार रहते हैं, पर वे अपनी त्रुटि को स्वीकार करना नहीं चाहते; इसी कारण कई अच्छे संशोधनों को स्वीकार नहीं किया गया है। पर हमें तृतीय वाचन से आशा है, जो मेरे विचार में दूसरा विस्तृत द्वितीय वाचन होगा, क्योंकि हमने बहुत सी गलतियां छोड़ दी हैं।

***पं. ठाकुरदास भार्गव** (पूर्वी पंजाब: जनरल): श्रीमान, मैं सविनय प्रस्ताव करता हूं:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 295-क में 'Constitution' शब्द के पश्चात् '(a)' ये अक्षर तथा कोष्ट प्रविष्ट कर दिये जायें और 'State' शब्द के पश्चात् निम्न प्रविष्ट कर दिये जायें:—

'(b) relating to the representation of the Anglo-Indian community either in the House of the people or in the Legislative Assemblies of the States through nomination.' "

इस संशोधन के सम्बन्ध में मैं सदन से प्रार्थना करता हूं कि वह इस बात पर विचार करे कि अनुच्छेद 295-क में निहित विद्यमान प्रस्थापना में केवल अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों का ही उल्लेख है। इसमें अनुच्छेद 293 और 295 का उल्लेख नहीं है। जब अनुच्छेद 293 और 295 स्वीकार किये गये थे और अल्पसंख्यक समिति के विविध सदस्यों में विनिश्चय हुआ था, तब आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय को स्थान-रक्षण के स्थान पर यह मनोनयन दिया गया था। पहली प्रस्थापना यह थी कि आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय को अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम जातियों के समान स्थान-रक्षण दिया जायेगा, पर उसमें पासंग का प्रश्न उठता था अत: अंत में उसका रूप मनोनयन का हो गया। आरंभ में यह स्पष्ट था कि आंग्ल-भारतीय जाति को मनोनयन के द्वारा यह रक्षण केवल दस वर्षों के ही लिये मिलेगा। यह बात कभी स्वीकार नहीं की गई कि उन्हें यह सदा के लिये मिलेगा; और जब हमने अनुच्छेद 293 तथा 295 पर अपने संशोधन पेश नहीं किये थे, तब हमें यही विश्वास था कि वास्तव में इस जाति को भी यह रक्षण दस वर्षों के लिये ही मनोनयन द्वारा मिलेगा। अत: यदि हम समझौते

को क्रियान्वित किया जाना है, तो इस मनोनयन के लिये दस ही वर्ष का समय नियत होना चाहिये। यदि कोई ऐसा समझौता न हो, तो मैं सदन के समक्ष अन्य कारण पेश करूंगा। मैं भी अल्पसंख्यक समिति का सदस्य था और मुझे स्मरण है कि जब विनिश्चय हुआ था तब यह सर्वथा स्पष्ट कर दिया गया था कि यह केवल दस वर्ष के ही लिये होगा। मैंने कुछ मुख्य सदस्यों से ही परामर्श किया है, जिन्होंने इस विनिश्चय पर पहुंचने में भाग लिया था और मुझे पक्के तौर पर पता लगा है कि जब समझौता हुआ था तब यही मंशा थी। क्योंकि हम अपने नेताओं के समझौते में गड़बड़ डालना नहीं चाहते थे। अत: हमने संशोधन पेश नहीं किये, अत: यह उचित ही है कि यह रक्षण दस वर्षों के ही लिये रखा जाये। यदि हम उन कारणों को भी देखें, जिनसे कि आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय को रक्षण किया गया है, तो समझौते के अतिरिक्त अन्य आधारों पर भी मनोनयन संबंधी ये उपबन्ध दस वर्ष से अधिक समय के लिये नहीं रहने चाहिये।

आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय सबसे अधिक प्रगतिशील सम्प्रदायों में से एक है, जो अन्य सम्प्रदायों की तुलना में अपने स्वत्व की रक्षा कर सकता है। मैं जानता हूं कि उनकी संख्या कम है, किन्तु कई अन्य सम्प्रदाय भी हैं जो ऐसे ही छोटे हैं। मुझे प्रसन्नता है कि हमारे नेताओं ने इस सम्प्रदाय के दावों पर विचार किया और उनके साथ उदारता का व्यवहार किया जैसा कि श्री एन्थनी ने स्वयं स्वीकार किया है। किन्तु साथ ही मेरा विश्वास है कि लोक सभा के विषय में यही एक सम्प्रदाय है, जिसे मनोनयन के द्वारा स्थान मिलेगा। किसी और जाति के लिये मनोनयन का उपबन्ध नहीं है और हम नहीं चाहते कि इस प्रकार के उपबन्ध द्वारा हमारा संविधान भद्दा बने। आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय की बहुत हद तक अनुच्छेद 297 और 298 के उपबन्धों द्वारा रक्षा हो गई है। इन उपबन्धों के सम्बन्ध में भी उन्हें दस वर्ष के स्थान पर बारह या उससे अधिक मिल रहे हैं। किसी जाति के लिये उचित तथा न्यायपूर्ण आधारों पर यदि कोई उपबन्ध किया जाता है, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है किन्तु साथ ही, जबकि अन्य सम्प्रदाय आगे आते हैं, जबकि अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों पर हमें विचार करना होता है, तो उनके दावे सर्वथा भिन्न आधार पर होते हैं; यदि वे अत्यन्त अधिक प्रतिनिधित्व मांगते हैं तो मैं उनकी स्थिति को समझ सकता हूं और वे जो चाहते हैं, वह उन्हें देने में हमें आपत्ति नहीं होनी चाहिये। किन्तु जहां तक किसी उन्नत जाति का सम्बन्ध है, कोई कारण नहीं है कि इस जाति का इतना अनुचित पक्षपात क्यों किया जाये कि ये उपबन्ध सदा के लिये रहें। आप कह सकते हैं कि यह केवल स्वविवेकाश्रित उपबन्ध है, पर जब कोई स्वविवेक का अधिकार दिया जाता है, तो विशेष परिस्थितियों में वह कर्तव्य ही बन जाता है।

अत: मेरा निवेदन है कि कोई कारण नहीं है कि हम इन उपबन्धों को दस वर्षों से अधिक अवधि के लिये स्वीकार करें, और मुझे इस मामले में कोई संदेह नहीं है कि यदि आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय ठीक तरह से रहे—और मुझे अपने अनुभव से पता है कि वे रहेंगे—हम अपने मित्र श्री एन्थानी को जानते हैं; वे

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

सदन के अधिकांश मित्रों को प्रिय हैं–और कोई कारण नहीं है कि यदि वे दस वर्ष पश्चात् साधारण निर्वाचनों में खड़े हों, तो सफल न हों। उस समय तक भारत का सारा रूप ही बदल जायेगा। अन्यथा मैं नहीं समझता कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित आदिम-जातियों के सदस्यों द्वारा पेश किये गये संशोधनों में अधिक बल क्यों नहीं है। दस वर्ष पश्चात् हमारा समाज ऐसा बन जायेगा कि जिसमें विद्यमान विभेद समाप्त हो जायेंगे और उनका आज के समान महत्व नहीं रह जायेगा। यदि हमें इस बात की आशा न हो, यदि हम इस आधार पर चलें कि वे विभेद रहेंगे, तो मेरा विनम्र निवेदन है कि कोई कारण नहीं है कि हमें अन्य जातियों के मामले में इस दस वर्ष की कालावधि को बढ़ाना क्यों न पड़े।

अनुसूचित जातियों के मेरे कुछ मित्रों द्वारा पेश किये गये संशोधनों पर मुझे कुछ आश्चर्य है। जिस दिन सदन में अल्पसंख्यकों सम्बन्धी प्रतिवेदन पर बहस हुई थी, उस दिन मैंने एक संशोधन पेश किया था कि वे रक्षण तथा मनोनयन केवल दस वर्षों के लिये ही होने चाहियें और उस संशोधन को स्वीकार कर लिया गया था। उसके साथ ही श्री नागप्पा का भी एक संशोधन था, जो उसी भाषा में था। अब वे सामने आकर दूसरी प्रस्थापना पेश करते हैं। मेरे विचार में उन्हें ऐसा करने का अधिकार नहीं है। अब वे ऐसा नहीं कह सकते, क्योंकि स्वयं वे तथा अन्य सदस्य सहमत हो गये थे कि स्थान-रक्षण दस वर्ष के लिये रहेगा जैसा कि मैंने कल निवेदन किया था—मैं आज भी उन्हीं युक्तियों को दोहराना नहीं चाहता—इस रक्षण के कारण सामान्य जनता द्वारा पूर्णत: निर्वाचन अधिकारों के उपयोग में बाधा पड़ती है। यह सामान्य समुदाय और अनुसूचित जातियों के लिये भी हानिकर है।

अत: मेरा नम्र निवेदन है कि जब हम अपने आपको पूर्ण निर्वाचनाधिकारों के प्रयोग से वंचित करने के लिये तैयार हैं तो हम यही चाहते हैं कि अपने मित्रों को खुश करें और साथ ही उनके साथ यथेष्ट न्याय करें। उन्हें इस स्तर पर लाने में भी दोष हमारा ही है। अब हमें ही यह देखना है कि वे पीछे न रह जायें और वे अन्य जातियों के साथ आगे बढ़ें। यह दस वर्ष का समय अनुसूचित जातियों के लिये एक चुनौती है कि वे अन्य लोगों के स्तर पर आ जायें, पर इससे सारे देश पर और भारत के समस्त सम्प्रदायों पर भी उत्तरदायित्व आ पड़ता है, क्योंकि केवल हिन्दू ही नहीं, वरन् मुस्लिम और सिक्ख और अन्य जातियां भी अब सामान्य सूची में ही हैं। अब यह हमारा सच्चा कर्त्तव्य हो जाता है कि दस वर्षों में ही हम ऐसा व्यवहार करें कि ये अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के लोग हमारे स्तर पर आ जायें। यदि यह जाति उस स्तर तक नहीं पहुंचती, जहां तक पहुंचने की उससे आशा की जाती है, तो अनुच्छेद 301, 296, 299 तथा 10 से लाभ ही क्या है? भविष्य में हमारा कर्तव्य यह देखना होगा कि केन्द्रीय सरकार तथा प्रान्तीय सरकारें अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के हमारे भाइयों के प्रति अपना कर्तव्य निबाहें।

श्री नागप्पा ने कुछ उपायों का संकेत किया है, जिनसे कि यह होना चाहिये। यह अवसर नहीं है और मैं यह बताने में बदन का समय नहीं लूंगा कि हमें

किन तरीकों से काम करना चाहिये, पर साथ ही मुझे यह कहना होगा कि सरकारों के अतिरिक्त हममें से प्रत्येक का कर्तव्य है, जिन्होंने यह बचन दिये हैं और जो इस संविधान का समर्थन करते हैं तथा इसकी दुहाई देते हैं कि हम यह देखें कि आगामी दस वर्षों के भीतर ही हम इन वर्गों को अपने स्तर पर ले जायें। यदि हम ऐसा नहीं करते, यदि हम अपने कर्तव्य नहीं करते, तो मैं नहीं जानता कि हम किस मुंह से अगले दस वर्षों के लिये उन्हें यही अधिकार देने से इनकार कर सकते हैं; और वह बहुत गम्भीर बात होगी, क्योंकि इससे अनुसूचित जातियों और हम सब पूर्ण निर्वाचनाधिकारों के प्रयोग के सामान्य अधिकारों से वंचित हो जायेंगे। अतः मेरा निवेदन है कि आज से हमें इसे पारित करके यह प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिये कि जब हम दस वर्ष रखते हैं, तो हमारी यही मंशा है कि यह दस वर्ष ही रहे, किन्तु साथ ही हमारा कर्तव्य और भी बढ़ जाता है और इसलिये आज से ही हमें ठीक प्रकार से अपना कर्तव्य करना आरंभ कर देना चाहिये। यह कर्तव्य इधर एक प्रस्ताव पारित करने से या उधर दूसरा प्रस्ताव पारित करने से पूरा नहीं होगा। जब तक आर्थिक स्थिति ठीक न हो जाये, जब तक हम उन्हें मनुष्यों के समान अनुभव न करा दें, जो वे आज नहीं करते, तो हमारा कर्तव्य पूरा नहीं होगा।

इस सम्बन्ध में मेरा निवेदन है इन सब सरकारों को एक विधि पारित कर देनी चाहिए जिससे उन्हें गांवों में अपने मकानों पर पूरे स्वामित्व के अधिकार प्राप्त हो जायें, जो उन्हें आज प्राप्त नहीं हैं। सबके समान उन्हें मूलाधिकार प्राप्त हैं, पर मुझे पता है कि कई गांवों में अनुसूचित जातियों के लोग मूलाधिकारों का उपयोग नहीं कर रहे हैं। इसी प्रकार मेरा निवेदन है कि अनुच्छेद 301 के अनुसार संविधान के आरंभ होते ही एक आयोग नियुक्त हो जाना चाहिये और जब आयोग अपना प्रतिवेदन दे दे, तब हमें यह देखना चाहिये कि उस पर अमल हो। अतः सदन से मेरा नम्र निवेदन है कि जब हम इस खंड को पारित करते हैं, तो यह देखना हमारा कर्तव्य हो जाता है कि हम यह देखें कि खंड विशेष के समर्थन के लिये हम अपने अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित आदिम-जातियों के भाइयों के प्रति अपना कर्तव्य करने में दृढ़ प्रतिज्ञ रहें तथा अपनी पूरी शक्ति लगा दें।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव करता हूं:

"कि प्रस्थापित अनुच्छेद 284-क के संशोधन संख्या 38 (प्रथम सूची) में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:—

'Provided that nothing in this article shall affect the representation in the House of the Poeple or in the Legislative Assembly of a State until the dissolution of the then existing House or Assembly, as the case may be'."

[परन्तु इस अनुच्छेद की किसी बात से लोक सभा के या राज्य की विधान सभा के किसी प्रतिनिधित्व पर तब तक कोई प्रभाव न होगा जब तक कि

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

यथास्थिति उस समय विद्यमान लोक सभा या विधान सभा का विघटन न हो जाये।]

श्रीमान, यह संशोधन तो स्वयं स्पष्ट है और इसे पेश करते समय मैं एकदम यह कह देना चाहता हूं कि मस्विदा समिति इसके लिये कोई मौलिकता या प्रतिलिप्याधिकार का दावा नहीं करती। यदि इस संशोधन के लिये प्रेरणा श्री नजीरुद्दीन अहमद के संशोधन से मिली है, तो हम उन्हें पूर्ण श्रेय देने के लिये तैयार हैं, किन्तु फिर भी मस्विदा समिति ने यह अनुभव किया कि श्री नज़ीरुद्दीन अहमद ने जैसी भूल बताई है, वैसी ही एक कमी है क्योंकि, यदि ऐसा हो जाये कि दस वर्ष की समाप्ति ऐसे समय पर हो, जबकि सदन का जीवन आरंभ ही हुआ हो या वह अपनी अवधि के बीच में हो, तो उस सदन के प्रतिनिधित्व पर—उस सदन की सदस्यता पर—डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित अनुच्छेद 295-क का प्रभाव नहीं पड़ना चाहिये। निस्संदेह सदन यह समझ जायेगा कि श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन से यह कहीं ज्यादा ठीक बैठता है।

मैं पंडित ठाकुरदास भार्गव के भाषण के सम्बन्ध में एक शब्द और कहना चाहता हूं। उन्होंने तर्कसंगत बनने का प्रयत्न किया है। जब वे बोल रहे थे, तो मैंने अनुभव किया कि वे एक छोटे से मच्छर पर भारी मशीनगन का प्रहार करने का प्रयत्न कर रहे थे। यदि राष्ट्रपति मनोनयन करना अपेक्षित समझे, तो लोक सभा में दो नाम निर्देशित स्थानों का उपबन्ध तथा, यदि राज्यपाल उचित समझें तो, राज्य के प्रथम सदन में कुछ स्थानों का उपबन्ध केवल अनुमति-मूलक उपबन्ध है। यह आवश्यक या आदेश-मूलक उपबंध नहीं है। यदि आंग्ल-भारतीय जाति को ये स्थान मनोनयन द्वारा न दिये जायेंगे, तो वे इस आधार पर न्यायालय में नहीं जा सकते कि संविधान में नामनिर्देशन का उपबन्ध है और प्राधिकारियों ने उसकी उपेक्षा कर दी है। राष्ट्रपति या सम्बद्ध राज्य के राज्यपाल को पूरा स्वविवेकाधिकार दे दिया गया है कि वह नामनिर्देशन करे या न करे। फिर एक शुद्धतः अनुमति-मूलक उपबन्ध पर ये सब युक्तियां तथा यह सब तक क्यों रखा जाता है?

जहां तक आंग्ल-भारतीय का सम्बन्ध है, निस्संदेह यह सत्य है कि वे संख्या में बहुत अधिक नहीं हैं। यह भी सच है, जैसा पंडित ठाकुरदास भार्गव ने कहा है कि इस सम्प्रदाय के लिये सेवाओं और शैक्षणिक सुविधाओं के विषय में क्रमशः अनुच्छेद 297 तथा 298 में विशेष उपबन्ध रख दिया गया है। वे पूछते हें कि ऐसा होते हुए इस राजनैतिक विशेषाधिकार को जारी रखने का उपबन्ध क्यों किया जाये। मैं उनसे कहना चाहता हूं कि वे इस प्रकार के छोटे से मामले पर चिन्ता न करें, जो कि केन्द्र तथा प्रांत दोनों में कार्यपालिका पर छोड़ दिया गया है। मैं उनसे यह भी कहना चाहता हूं कि वे एक बात पर विचार करें कि अनुसूचित

जातियां तो हिन्दू जाति का भाग हैं और हमारा अंग हैं, और केवल उनके जीवन का आर्थिक स्तर ही नहीं दूसरों के साथ समानता की स्थिति प्राप्त करने से रोकता है—पर आंग्ल-भारतीय एक अलग ही सम्प्रदाय है। क्योंकि यह समझा जाता है कि हम भविष्य में यूरोपीय सभ्यता से, जिसके अधीन हम अपने दासता के युग में रहे हैं, अधिकाधिक दूर चले जायेंगे। आंग्ल-भारतीय जाति तथा हमारे देश की अन्य जातियों की जीवन-प्रणाली में जो अन्तर है, वह आगे से और भी अधिक हो जायेगा और आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय की हमारे समाज में खपने की संभावना और भी कठिन हो जायेगी। यह सब इस बात पर निर्भर है कि हमारा जीवन-स्तर पाश्चात्य ढंग का होगा या हम अब फिर इसे छोड़कर पीछे हट जायेंगे। इन सब समस्याओं के विषय में हम नहीं जानते कि उनका अंतिम रूप क्या होगा। इन लोगों से यह कहना अन्याय होगा कि वे इस देश के समाज में विलीन हो जायें, यदि भविष्य में हमारा जीवन स्तर अब से भी गिर जाये।

अल्पसंख्यक समिति ने अपने प्रतिवेदन के परिशिष्ट के पृष्ठ 35 पर यह रियायत देते हुए कहा है:

> "आंग्ल-भारतीयों के लिये स्थान-रक्षण नहीं होना चाहिये। किन्तु संघ के राष्ट्रपति तथा प्रांतों के राज्यपालों को अधिकार होगा कि वे केन्द्र तथा प्रांतों में क्रमश: प्रतिनिधि नियुक्त कर सकेंगे, यदि साधारण निर्वाचन के फलस्वरूप उन्हें विधान-मंडल में पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त न हो।"

वास्तव में ऐसा होगा कि यदि श्री एन्थनी केन्द्रीय विधान-मंडल में आ जायेंगे तो शायद किसी और को अवसर नहीं मिलेगा। राष्ट्रपति को नामनिर्देशन के सम्बन्ध में अपने स्वविवेकाधिकार के प्रयोग का कोई अवसर नहीं है और उसे मंत्रिमंडल के विचारों पर चलना होगा। इसी प्रकार प्रान्तों में केवल अनुमति मात्र दी गई है कि यदि बहुसंख्यक जाति आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय की अवहेलना कर दे, तो उस भूल को सुधारा जा सकता है। मेरे विचार में यह रियायत दस वर्ष तक सीमित नहीं होनी चाहिये। यह आदेशमूलक उपबन्ध नहीं है, जैसे कि अन्य सम्प्रदायों के लिये उपबन्धित रक्षण हैं।

अत: मेरा सुझाव है कि मेरे माननीय मित्र पंडित ठाकुरदास भार्गव अपने संशोधन पर जोर न दें। यह बहुत छोटी सी चीज है। भारत की आंग्ल-भारतीय जाति को यह संदेहास्पद विशेषाधिकार, जो समय-समय कार्यपालिका उन्हें कृपा के रूप में प्रदान करेगी, आवश्यकता होने पर दस वर्ष से अधिक समय के लिये भी दे दिया जाये, तो क्या बुराई है? मुझे आशा है कि वे अपने संशोधन पर जोर नहीं देंगे।

***श्री चन्द्रिका राम** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा संशोधित रूप में डॉ. अम्बेडकर के संशोधन का समर्थन करने

[श्री चन्द्रिका राम]

के लिये यहां आया हूं। इस सदन के तथा बाहर के अनुसूचित जातीय सदस्यों के लिये केवल यही विचारणीय प्रश्न है कि यह दस वर्ष की अवधि बहुत कम है। यह एक तथ्य है कि शायद इस छोटी सी कालावधि में अनुसूचित जातियां अन्य जातियों के स्तर पर नहीं आ सकेंगी। इसका आधार यह है कि प्रांतीय सरकारें तथा केन्द्रीय सरकार यथेष्ट प्रयास नहीं कर रही हैं। हम विगत दस से 15 वर्षों के व्यक्तिगत अनुभव से यह जानते हैं कि जब कांग्रेस मंत्रिमंडल सर्वप्रथम सत्तारूढ़ हुए, तब दलित वर्गों के उत्थान के लिये कुछ भी क्रियात्मक या सारवान कार्य नहीं किया गया, यद्यपि वे वर्ग आर्थिक, सामाजिक तथा शैक्षणिक रूप में पिछड़े हुए हैं। यह तो विश्वास का प्रश्न है। हम दस वर्ष भी नहीं चाहते, यदि केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारें चाहें तो वे आगामी पांच वर्षों में भी बहुत कुछ कर सकते हैं। पर यहां तो सुविश्वास का प्रश्न ही नहीं है। अनुसूचित जातियों के सदस्यों को यही तो आशंका है, जिससे कि उन्होंने इस कालावधि को बढ़ाकर पंद्रह वर्ष अथवा अधिक करने के लिये इतने संशोधन पेश किये हैं।

हमें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा किये गये कार्य का पता है और हम सब उस महान व्यक्ति के अनुयायी हैं। किन्तु जब हम प्रांतों तथा केन्द्र के वास्तविक कार्य को देखते हैं, तो हमें पता लगता है कि कुछ नहीं किया गया है। यह कहना बहुत अच्छा है, कि पिछड़े हुए वर्गों के लिये एक पृथक विभाग होना चाहिये और पिछड़े हुए वर्गों में से एक मंत्री और संसदीय सचिव होना चाहिये। मैं यह अनुभव करता हूं कि यदि आप कुछ मंत्री नियुक्त कर दें और कुछ पद निश्चित कर दें और अनुसूचित जातियों तथा आदिम-जातियों को कुछ विभाग दे दें, तो आप उन लोगों की स्थिति को सुधार सकते हैं। मुझे पता है कि प्रांतों में भूतपूर्व मंत्रिमंडलों ने कैसा काम किया था। बंबई प्रांत में अनुसुचित जातियों के कोई मंत्री या संसदीय सचिव नहीं थे, पर वहां जो कल्याण कार्य हुआ था, वह देश के किसी प्रांत से अधिक अच्छा हुआ। अतः विशेष संसदीय सचिवों या मंत्रियों अथवा विशेष पदाधिकारियों को रखे बिना भी अनुसूचित जातियों के लिये बहुत कुछ किया जा सकता है। हम जानते हैं कि केन्द्र में डॉ. अम्बेडकर तथा श्री जगजीवन राम जैसे दो अतीव महत्वपूर्ण मंत्री हैं। पर हम यह भी जानते हैं कि अनुसूचित जाति मंडली में 3,000 आवेदन-पत्र हैं, पर केवल 625 छात्रवृत्तियां हैं। मंत्रियों और संसदीय सचिवों को रखने से क्या लाभ है, यदि धन न हो? सारा प्रश्न यह है कि आपके पास धन होना चाहिये। यदि प्रांतीय मंत्रियों तथा केन्द्रीय मंत्रियों को, जो कि सब महात्मा गांधी के अनुयायी हैं, पर्याप्त धन मिला हुआ हो, तो कोई पद या विभाग बनाये बिना ही वे अनुसूचित जातियों के लिये काफी काम कर सकते हैं और उन्हें समाज के सामान्य स्तर पर ला सकते हैं।

अतः यह विश्वास का प्रश्न है, भरोसे का प्रश्न है तथा सद्भावना का प्रश्न है। मैं यह कहना चाहता हूं कि यदि यह कार्य इस कालावधि में पूरा नहीं होगा,

तो अनुसूचित जातियां हिन्दू जाति के और व्यापक समुदाय के विरुद्ध चल पड़ेंगी। अत: हो सकता है ऐसा व्यापक सुधार न हो, जिसकी दस वर्ष में होने की हम आशा करते हैं। मैं कालावधि की अधिक चिन्ता नहीं करता; मुझे तो कार्य की चिन्ता है। मैं जानता हूं कि गत 25, 30 वर्षों में भी महात्मा गांधी तथा इसके लिये कार्य करने वाले अन्य लोग अस्पृश्यता को दूर करने के विषय में अधिक प्रगति नहीं कर सके। आप जानते हैं कि आज भी वैसा ही बुरी हालत है, जैसी पहले थी और मैं जानता हूं कि नगरों में शिक्षित लोगों में और अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त लोगों में कुछ परिवर्तन हुआ है और यही बात है जिससे हमें प्रोत्साहन मिला है। और हम जानते हैं कि इस निर्योग्यता को हटाने के लिये प्रान्तीय सरकारें कुछ प्रयास कर रही हैं। हमारे लिये, देश के लिये तथा इस महान सभा के लिये यह अच्छी बात है कि हमने अस्पृश्यता को सदा के लिये हटाने वाला अनुच्छेद 11 पारित कर दिया है। पर इस प्रयोजन के लिये केवल विधान पारित कर देने, या मंत्री नियुक्त कर देने या कुछ विभाग दे देने से कुछ नहीं होगा। यदि समस्त कार्य पूरा करना है तो इसके लिये धन मिलना आवश्यक है और केन्द्रीय तथा प्रांतीय सरकारों से मेरा यही अनुरोध है कि वे इस कार्य के लिये पर्याप्त कोष प्रदान करें, जिससे कि उनका शैक्षणिक उत्थान हो सके और आर्थिक रूप में उनकी स्थिति सुधर सके। उनकी सामाजिक स्थिति के विषय में हम जानते हैं कि सामाजिक मामलों में हमें शीघ्रता नहीं करनी चाहिये। सामाजिक मामलों में तो हृदय परिवर्तन का प्रश्न है। मैं जानता हूं कि जो लोग देश के लिये फांसी पर चढ़ने के लिये तैयार हैं, वे भी अपने घर में से या अपने परिवार के सदस्यों में से अस्पृश्यता को हटाना नहीं चाहते, क्योंकि यह सामाजिक रूढ़ि है। यह बहुत प्राचीन काल से चली आती हुई सामाजिक प्रथा है; यह तो इन सवर्ण हिन्दुओं और समूची हिन्दू जाति की नस नस में समा गई है, क्योंकि यह कई शास्त्रों, वेदों आदि में लिखी है।

अत: सामाजिक मामलों में हमें प्रतीक्षा करनी है और दोनों पक्षों को प्रतीक्षा करनी होगी। सामाजिक क्रांति तो तत्काल हो नहीं सकती क्योंकि भारत एक बृहद् देश है जिसमें बहुत लोग हैं, जिनके भिन्न-भिन्न विचार हैं और भिन्न-भिन्न विश्वास हैं। हम जातने हैं ऐसे मत हैं, जिनमें अस्पृश्यता अपराध है, जैसे सिक्ख मत, बौद्धमत तथा मुस्लिमों में भी हैं। अत: सामाजिक मामले में हमें प्रतीक्षा करनी होगी; हमें काम करना है और हमें धीरे-धीरे चलना है। उनकी आर्थिक स्थिति के बारे में हमें कुछ और भी करना है। अभी तक उन्होंने कुछ नहीं किया है। वास्तव में हमारे समक्ष कोई कार्यक्रम नहीं है कि पहले क्या करना चाहिये। काम करने में हमें प्राथमिकता का ख्याल होना चाहिये। हरिजनों के लिये हमारे पास कोई योजना नहीं है और कोई कार्यक्रम नहीं है और कार्य करने के लिये कोई वास्तविक नीति नहीं है। अत: मेरा सुझाव यह था कि भारत सरकार को तत्काल एक आयोग या समिति नियुक्त करनी चाहिये, और उस आयोग या समिति को हरिजनों के सामाजिक, शैक्षणिक तथा आर्थिक क्षेत्रों के सब मामलों पर विचार करना चाहिये और ऐसे

[श्री चन्द्रिका राम]

उपाय तथा तरीके सुझाने चाहिये और सिफारिशें करनी चाहिये, जिससे कि प्रांतों की या केन्द्र की सरकारें चुनाव के बाद ही आयोग के प्रतिवेदन में सुझाये गये तरीकों से कार्य आरम्भ कर सकें। मेरा यह सुझाव था। मेरे लिये कालावधि का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण नहीं है।

जैसा कि मैं पहले कह चुका हूं, सरकार के पास जितना धन उपलब्ध हो, उसका प्रश्न और विश्वास तथा सद्भावना तथा सदेच्छाओं का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। अन्यथा हम, अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि सदस्य, हम चाहते हैं कि दस वर्ष के लिये यह रियायत भी नहीं रहनी चाहये, यदि उसी अवधि में हमारी हालत बहुत सुधर जाये। हमें इस जाति-पाति को हटाने में प्रसन्नता होगी कि अनुसूचित जातियां, हरिजन, अछूत आदि को हटा दिया जाये, यदि हमारी सामाजिक हालत इस कालावधि में सुधर जाये। हमें अपने नेताओं पर विश्वास है, हमें भविष्य पर विश्वास है और यदि हम कालावधि में हमारी हालत न सुधरे, तो हमें आशा है और विश्वास है कि दस वर्षों के पश्चात् हमारे सम्प्रदाय के सदस्य, सभा तथा परिषद् के सदस्य, सरकार के सदस्य, प्रांत तथा केन्द्र इस विषय पर सोचेंगे और इन प्रश्नों पर विचार करेंगे और यदि अधिक काल की आवश्यकता है तो वे दे देंगे। अतः हम कालावधि के लिये इतने आतुर नहीं हैं, पर इस बात के लिये आतुर हैं कि हमें पर्याप्त धन मिले और हम बहुसंख्यक सम्प्रदाय, स्वर्ण हिन्दू समाज के लोगों की सद्भावना प्राप्त करने के लिये आतुर हैं।

***श्री जगत नारायण लाल** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, स्थान-रक्षण का सिद्धान्त सामान्यतः ऐसा है जिससे हमारे देश को बहुत हानि पहुंची है। मैं इस पर अधिक समय नहीं लेना चाहता, और यदि हममें अनुसूचित जातियों और आदिवासियों के लिये स्थान-रक्षण का यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाता है, तो इसका यही कारण है कि उनका पक्ष बहुत प्रबल है। यदि कोई पक्ष प्रबल है, तो हमारे देश में इन दो वर्गों का ही हैं। यह प्रस्थापना तो सचमुच अभीष्ट है कि यह कालावधि दस वर्ष में ही समाप्त हो जाये और उसके पश्चात् कोई स्थान-रक्षण न रहे। किन्तु साथ ही मैं पूर्ववक्ता की बातों का विनम्रता के साथ समर्थन करता हूं और उन्होंने सदन में जो भाव प्रकट किये हैं, उनसे मैं हृदय से सहमत हूं। यदि हम वास्तव में अनुसूचित जातियों को उस स्तर पर ले आना चाहते हैं, जिस पर इस देश की अन्य जातियां अब हैं, तो हमें इस मामले में बहुत सच्चे मन से कार्य करना होगा। यदि प्रांतीय सरकारें या केन्द्रीय सरकार इस बात से संतुष्ट हो जायें कि उन्होंने कुछ पदाधिकारी नियुक्त कर दिये हैं और कुछ धन अलग रख दिया है और इस प्रकार उनका कर्त्तव्य पूरा हो गया है, तो यह उचित नहीं होगा। हमने देखा है कि यहां अनुसूचित जातियों के सदस्य एक के बाद एक उठते रहे हैं, वे वक्ता हमारी राष्ट्रीय भावनाओं में भागी हैं, जो उतने ही देशभक्त हैं, किन्तु उन्हें अपने भाइयों का ख्याल है और उन विपत्तियों तथा

कष्टों का ख्याल है, जो उन्हें विशषत: देश के आंतरिक भागों में सहने पड़ते हैं। अत: मेरा सुझाव है कि यदि केन्द्रीय सरकार तथा प्रांतीय सरकारें वास्तव में चाहती हैं कि यह दस वर्ष का समय बढ़ना नहीं चाहिये और दस वर्ष में ही हमें अपने देश के दोनों वर्गों के प्रति अपने कर्त्तव्य को सच्चे मन से पूरा करना चाहिये, जो कि अब तक पीछे रह गये हैं, तो हमें इस मामले में सचमुच बहुत सच्चे मन से कार्य करना चाहिये और मैं यह सुझाव देना चाहता हूं कि सरकार को चाहिये कि वह प्रांतीय सरकारों को प्रोत्साहन दे और संभव हो तो एक-दो वर्ष के अंत में देखती रहे कि इस मामले में क्या प्रगति हुई है। यदि, श्रीमान, इन दस वर्षों में सरकारों, उच्च वर्गों तथा अनुसूचित जातियों के संगठित प्रयत्नों द्वारा भी हम उन्हें उस स्तर तक नहीं उठा सके, जिस तक हम इस देश के सब सम्प्रदायों तथा जनवर्गों को उठाना चाहते हैं, तो उस रक्षण-अवधि को समाप्त करने का कोई आधार नहीं होगा। और इसलिये एक ओर तो मैं इस प्रस्थापना का समर्थन करता हूं कि इस दस वर्ष की कालावधि के लिये ही स्थान रक्षण हो तथा उसके बाद इस देश में कोई स्थान रक्षण न रहे, पर मैं पूर्ववक्ता श्री चन्द्रिका राम तथा अन्य वक्ताओं के इस अनुरोध का प्रबल समर्थन करता हूं कि सरकार, जनता, तथा देश की विधि संस्थाओं को इस बात का प्रत्येक संभव प्रयत्न करना चाहिये कि अनुसूचित जातियों तथा आदिवासी लोगों को उस स्तर पर उठाकर ले आया जाये, जिस पर इस देश की अन्य जातियां अब तक पहुंच चुकी हैं।

जहां तक आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय का सम्बन्ध है, मैं भी पंडित ठाकुरदास भार्गव के समान यह अनुभव करता हूं कि यह बहुत उन्नत सम्प्रदाय है। यदि उन्हें कोई रक्षण दिया जाता है, तो वह केवल इसलिये कि वे बहुत अल्पसंख्या में हैं। इस आधार पर हमें इस देश में बहुत सी जातियां मिल सकती हैं, जो अल्पसंख्या में हैं। किसी जाति को, चाहे वह इस देश में कितनी ही छोटी हो, विधान-मंडल में या कहीं भी अल्पसंख्यक होने के आधार पर कभी भी प्रतिनिधित्व मांगने का या पाने का ख्याल नहीं करना चाहिये। केवल सेवा और क्षमता ही एक कसौटी है। मैं अनुभव करता हूं कि यदि आंग्ल-भारतीय सम्प्रदाय में, जो कि प्रगतिशील है, सचमुच ऐसे सदस्य हैं, जो इस देश तथा जनता के प्रति सेवा की भावना से उतने ही प्रेरित हैं, तो उन्हें प्रतिनिधित्व प्राप्त होता रहेगा तथा यह देश उन्हें उस प्रतिनिधित्व से वंचित नहीं करेगा। मैं उनकी सेवा, क्षमता तथा योग्यता पर ही अधिक निर्भर करना चाहता हूं, और संविधान द्वारा उन्हें विधान-मंडल में या यहां-वहां रक्षण देने तथा प्रतिनिधित्व देने पर नहीं। मैं इस अनुच्छेद पर ये थोड़े से शब्द ही कहना चाहता हूं।

***श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, इस सदन में अनुसूचित जातीय सदस्यों ने अलग-अलग संशोधन पेश किये हैं। उन संशोधनों से सदन को यह सर्वथा स्पष्ट है कि इस समय भी अनुसूचित जातियों को अपने भविष्य की बहुत आशंका है कि इस संविधान के लागू होने के दस वर्ष के पश्चात् भी उनकी क्या स्थिति होगी। मैं उनकी प्रस्थापना पर कुछ भी टिप्पणी नहीं

[श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन]

करना चाहता, पर मैं इस महान् सदन से केवल यही निवेदन करता हूं कि अनुसूचित जातियों के मन में सच्ची आशंका है, और इसलिये मैं सदन से अनुरोध करता हूं कि वह सारी स्थिति पर विचार कर ले।

इस मामले में मेरे भी भिन्न विचार हैं। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि यदि सच्ची सहानुभूति नहीं है, यदि केवल मौखिक सहानुभूति ही हो, तो दस वर्ष ही क्या बीस वर्ष से भी कोई लाभ नहीं है। जब तक इस देश की उन्नत जाति इस बात को न समझेगी कि उन्होंने अपने भाइयों के प्रति कुछ बुराई की है, और अब उनका कर्तव्य सहायता करना है, तब तक हमें वह चीज़ प्राप्त नहीं हो सकती, जो हम चाहते हैं और जिसकी देश को आवश्यकता है। मैं उनसे अनुरोध करता हूं कि वे बिल्कुल अलग प्रकार से सोचें। अनुसूचित जातियां तथा अनुसूचित आदिमजातियां कौन हैं? क्या वे भारत की जनता के 85 या 90 प्रतिशत नहीं हैं? मेरे बहुत से मित्रों ने असंख्य बार ग्राम्य जनता के लिये चिन्ता प्रकट की है। मेरे विचार में ग्राम्य जनता कुल मिलाकर अनुसूचित जातियों, अनुसूचित आदिमजातियों तथा पिछड़े हुए वर्गों को ही कहते हैं। आप 85 या 90 प्रतिशत जनता को पिछड़ी हुई स्थिति में छोड़ रहे हैं। जब तक आप इस 85 प्रतिशत जनता को उच्च स्तर पर नहीं ले आते, तब तक क्या भारत के लिये एक भी कदम आगे बढ़ना संभव है, जैसा कि स्वतंत्र भारत से आशा की जाती है? मेरे विचार में यह संभव नहीं है। यह मेरा व्यक्तिगत विचार नहीं है। मैं भारत के एक महान व्यक्ति महारे स्वर्गीय मान्य कवि रविन्द्र नाथ ठाकुर की उद्धरण दे सकता हूं। एक बार उन्होंने 'मेरा अभागा देश' नामक कविता लिखी थी; वास्तव में उस कविता का सारा विषय यह है कि 'अब तक आप अपनी जनता के इस 90 प्रतिशत अंश को ऊंचा नहीं उठाते, तब तक आप कभी उठ नहीं सकते क्योंकि जो पीछे रह गये हैं, वे आपको पीछे खींच रहे हैं," उन्होंने यह लिखा है। यदि आप उस दृष्टिकोण से यह समझ जायें कि जब तक आप 80, 90 प्रतिशत जनता को न उठा लें तब तक आप स्वयं नहीं उठ सकते; आप यथेष्ट प्रगति नहीं कर सकते। मेरे विचार में इस अभागे देश की दशा सच्ची कार्यवाही से ही सुधर सकती है।

यह इस मामले का एक पहलू है, जो मैं अपने समुन्नत माननीय मित्रों के समक्ष रखना चाहता हूं। मेरा अपने अनुसूचित जातीय भाइयों से भी एक अनुरोध है, वह यह है। हम देखते है कि 1932 से इन अनुसूचित जातियों को पृथक सम्प्रदाय के रूप में स्वीकार किया गया था। और उन्हें तत्कालीन सरकार ने कुछ रियायतें दी हुई थीं। तत्पश्चात् 1935 का अधिनियम बना, उन्हें एक भिन्न अंग मान लिया गया और उस अधिनियम में ही हमारे उत्थान के लिये कई उपबन्ध हैं। किन्तु 1935 या 1937 से अब तक, एक युग से अधिक बीत गया है और मैं पूछता हूं, हमने वास्तव में कितनी उन्नति की है? हमारी जाति के एक भाग

के अतिरिक्त जिसे शिक्षा प्राप्त करने का कुछ अवसर मिल गया है, हमारे शेष भाई उसी स्थिति में हैं। इस प्रकार हमारी विद्यमान सरकार ने हमें कुछ ढील दी, छात्रवृत्ति आदि देकर यत्र तत्र कोई मंत्री या संसदीय सचिव नियुक्त करके कई रियायतें दी हैं। किन्तु में नहीं समझता कि सब अनुसुचित जातियों की स्थिति में कुछ सुधार हुआ हो। मेरे विचार में हमारे उन्नत भाइयों के हृदय में हमारे लिये सहानुभूति है, क्योंकि वे हमें अधिक समझते हैं, जितना हम स्वयं अपने आप को नहीं समझते हैं। और अब यह हमारा काम है कि उस सरोवर का जल खूब पीयें और अपने उचित दावों को सरकार के समक्ष रखें, जनता के तथा इस महान संस्था के समक्ष रखें। यदि उसके बाद भी हमारे उचित दावों को और मांगों को पूरा न किया गया, तो हमारा कर्तव्य होगा कि हम अपने पैरों पर खड़े हो जायें तथा अपने उचित भाग को प्राप्त करने का यथासम्भव प्रयत्न करेंगे।

आखिर मैं भारत में हमारी स्थिति पर इस प्रकार विचार करना चाहता हूं कि हम चार भाइयों का परिवार हैं। ज्येष्ठ भ्राता ने किसी प्रकार शिक्षा, सार्वजनिक जीवन तथा अन्य प्रकार के अनुभव प्राप्त कर लिये हैं और वह बहुत उन्नत है। शेष तीनों भाई अंधकार में रह गये और वे पीछे पड़े हैं। जब तक तीनों भाई ज्येष्ठ भ्राता के समान अपने अपने समानाधिकारों को नहीं समझेंगे तब तक मैं नहीं समझता कि ज्येष्ठ भ्राता सचमुच यह समझेगा कि अपने अन्य भाइयों के प्रति न्याय करना उसका कर्तव्य है, क्योंकि मनुष्य मूलतः स्वार्थी है और मनुष्य के विषय में जो बात है, वही वर्ग के विषय में भी है। जब तक इस देश में वर्ग-विभेद है तब तक इसका कोई हल नहीं है और एक बार वर्ग-विभेद समाप्त हो जायेगा तो सब झगड़ा समाप्त हो जायेगा। मुझे पता नहीं वह कब समाप्त होगा। स्वतंत्रता के दो वर्ष पश्चात् भी मैं नहीं देखता कि सरकार ने या कांग्रेस संस्था ने इस कलंक को मिटाने के लिये कोई सक्रिय या प्रबल कार्यवाही की हो, यद्यपि हम प्रति दिन इसे कलंक स्वीकार करते हैं। अतः अब इस आशा को छोड़ देना चाहिये। हमें अपने अधिकारों को प्राप्त करना है। आखिर हम एक ही भूमि के बालक हैं और यदि हमारा ज्येष्ठतम भ्राता कुछ कार्य कर रहा है, तो हम कुछ और कार्य कर रहे हैं और देश की विधि के अनुसार हमें उस सब पूंजी पर समान अधिकार है, जो हमारी मातृभूमि ने हमें प्रदान की है। अतः यदि हम अपने अधिकार पर अड़ जायें तो हम देखेंगे कि वह अधिकार स्वीकृत हो और यदि वह स्वीकृत नहीं होगा, तो हम अपने पैरों पर खड़े हो सकते है। विद्रोह करिये—मैं जान बूझ कर विद्रोह शब्द का प्रयोग कर रहा हूं—यदि न्याय न हो, विद्रोह द्वारा ही न्याय किया जा सकता है और एक बार हम अपने अधिकारों पर अड़े जायें और उसे पाने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ हो जायें, तो मैं जानता हूं कि उस न्याय को प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होगी, क्योंकि आखिर भारत के संविधान में, जो कि संविधान सभा द्वारा बनाया जा रहा है, एक मूल अधिकार रखा गया है—वह प्रौढ़ मताधिकार का अधिकार है। यदि हम देखें कि इस देश के बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा हमारे हितों का रक्षण नहीं हो रहा है, तो हमें यही करना है कि हम अपने लोगों को चुनें और वयस्क मताधिकार के आधार पर, मुझे संदेह नहीं है, हम किसी सभा या परिषद् में बहुमत प्राप्त कर लेंगे। अतएव हम शासन को अपने हाथों में ले सकते हैं और दूसरों के साथ तथा अपने साथ न्याय कर सकते हैं।

[श्री उपेन्द्र नाथ बर्मन]

अत: हमें केवल दया तथा न्याय की पुकार नहीं करनी चाहिये, हमें केवल न्याय की मांग ही नहीं करनी चाहिये, वरन् अपनी हालत को ऊंचा उठाने का भी प्रयत्न करना चाहिये। उस प्रयोजन के लिये यदि हम देखें कि कुछ जातियां सहयोग नहीं कर रही हैं, तो हमारा अगला कर्तव्य यह होगा कि सरकार को अपने हाथ में ले लें। किन्तु वह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति होगी। मेरा आशय यह है कि हमें अपना कर्तव्य करना चाहिये और फिर उन लोगों को गाली देनी चाहिये, जो सत्तारूढ़ हैं कि वे हमारे साथ न्याय नहीं करते। उस विषय में मैं निवेदन करना चाहता हूं कि यह दस वर्ष की सीमा ठीक है। जब तक हम यह समझते रहेंगे कि उन्नत जाति हमारे लिये सब कुछ कर देगी तब तक मेरे विचार में हमारे मन में एक आलस रहेगा जिसके कारण हम वह चीज प्राप्त करने का प्रयत्न नहीं करेंगे जिसका हमें न्यायोचित अधिकार है। पर यदि एक बार निश्चित हो जाये कि दस वर्ष की सीमा है तो कल से हमें सोचना पड़ेगा कि हमें क्या करना चाहिये। हमें वयस्क मताधिकार प्राप्त होगा तथा शासन में अपने आदमी भेजने का अधिकार होगा। मेरे विचार में हमारे मार्ग में कोई कठिनाई नहीं होगी। किन्तु यदि हम अनिश्चित रूप से कोई कालावधि निश्चित कर दें, तो इस अभिप्राय के लिये जो शक्ति आवश्यक है वह नहीं लगाई जायेगी। अत: मैं डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तावित तथा संशोधित अनुच्छेद का समर्थन करना चाहता हूं और अपने अनुसूचित जातीय भाइयों से अनुरोध करना चाहता हूं कि वे उन्नत सम्प्रदाय से सहयोग करें और जिस दिशा में हमें न्याय की आवश्यकता है उनसे प्राप्त करें, किन्तु ऐसा न होने पर मैं उनसे कहता हूं कि वे एक हो जायें और हमारे लिये जो न्याय उचित है वह प्राप्त करें।

***श्री जदुबंश सहाय** (बिहार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, आपकी अनुमति से मैं श्री युधिष्ठर मिश्र के संशोधन का, जहां तक अनुसूचित आदिमजातियों का सम्बन्ध है, विश्लेषण करना चाहता हूं। जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, काफी कहा जा चुका है और इस विषय में अधिक कुछ कहकर मैं सदन का समय नष्ट नहीं करना चाहता। श्री युधिष्ठिर मिश्र के संशोधन का प्रभाव यही होगा कि 10 वर्ष पश्चात् भी अनुसूचित आदिमजातियों के लिये स्थान-रक्षण जारी रहेगा। मैं सादर निवेदन करता हूं कि आदिमजातियों के दृष्टिकोण से यह तरीका गलत है। इस समस्या पर हमें आदिमजातियों के पिछड़ेपन पर ध्यान रखकर विचार करना चाहिये। हम जानते हैं कि आदिमजातियां पिछड़ी हुई हैं और हमें पता है कि शताब्दियों से उनका शोषण होता रहा है। हम यह भी जानते हैं कि आर्थिक तथा राजनैतिक रूप में वे पिछड़े हुए हैं; किन्तु हमें यह नहीं सोचना है कि आदिमजातियां अपने लिये क्या करेंगी, वरन यह सोचना है कि हमें उनके लिये क्या करना चाहिये। मुझे अपने आप पर और जिस संस्था का मैं हूं, उस पर विश्वास है और मुझे विद्यमान सरकार की लोकतंत्रीय व्यवस्था पर विश्वास है और मैं कह सकता हूं

कि दस वर्ष के भीतर ही यदि आप आदिमजातियों की स्थिति न सुधार सके तथा उनका उद्धार न कर सके, तो हमारे लिये यह दु:ख की बात है, आदिमजातियों के लिये नहीं। एक बार डॉ. कुंजरू ने कहा था कि इस संविधान से और इस संविधान की पुस्तक में लिखे हुए अक्षरों से कोई लाभ नहीं होगा, यदि इन्हें क्रियान्वित करने वाले लोग ईमानदार नहीं होंगे।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): श्रीमान, क्या मैं कह सकता हूं कि श्री सहाय को ध्वनियंत्र में बोलना चाहिये। उनकी बात सुनाई नहीं दे रही है।

***श्री जदुबंश सहाय:** मैं कह रहा था कि संविधान में जो कुछ लिखा है, केवल उसी से कुछ लाभ नहीं होगा। अक्षरों से, मुद्रित निर्जीव अक्षरों से आदिमजातियों को या इस देश के पद-दलित नागरिकों के किसी भाग को कोई लाभ नहीं होगा। इसके लिये कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है; ऐसे लोगों की आवश्यकता है, जिनमें महात्मा गांधी की शक्ति, भावना, संदेश तथा उनके जैसे विचार हों। मैं मानता हूं कि हम बहुत दूर चले गये हैं और महात्मा गांधी के उपदेश का अनुसरण नहीं कर सके हैं। किन्तु अब भी हम में एक चिनगारी शेष है और मुझे संदेह नहीं है कि हम दस वर्षों में ही आदिमजातियों के लिये वह सब कुछ कर सकेंगे, जो हम समझते हैं हमें करना चाहिये। यह आदिमजातियों की परीक्षा नहीं है, यह हमारी परीक्षा है—यह दस वर्ष का समय—और इसलिये मैं अपने मित्रों से अनुरोध करता हूं कि इस समस्या पर आदिमजातियों के दृष्टिकोण से विचार न करें।

कल यह कहा गया था—कल जो कुछ आलोचना की गई थी उसका विश्लेषण करके मैं सदन का समय नष्ट नहीं करूंगा—मैं उस विषय पर नहीं बोलूंगा, क्योंकि मेरे पास समय कम है, पर मुझे यह तो कहना पड़ेगा कि कल के अनुत्तरदायी वक्तव्यों से तथा निराधार कथनों से आदिवासियों को लाभ नहीं होगा। मैं स्वीकार करता हूं, हम जानते हैं कि आठ दशाब्दियों से अब तक हमारे ऊपर दोष लगाये गये हैं। हम अपना दोष स्वीकार करते हैं और हम, जो कुछ हो सकता है, करने के लिये तैयार हैं, पर केवल हमें दोष देने से आप किसकी सहायता कर पायेंगे। इससे उनके दिल भी ठंडे पड़ जायेंगे, जो वहां आदिमजातियों के लिये कार्य कर रहे हैं।

मुझसे पूछा गया था, बिहार सरकार ने या दूसरी सरकारों ने उनके लिये क्या किया है? मैं उन्हें समझाने का प्रयत्न नहीं करूंगा जो समझना ही नहीं चाहते; पर समय मिला तो मैं आपको कुछ आंकड़ें दूंगा। तीन वर्षों में, आपको आश्चर्य होगा कि, छोटा नागपुर के पांच जिलों में सिंचाई के बांध बनाने पर एक करोड़ रुपये खर्च किये गये हैं। क्या वह राजनीति है? बांध इसलिये बनाये गये थे, जिससे कि आदिवासी अपने खेतों की सिंचाई कर सकें और जहां एक क्यारी उगती थी

[श्री जदुबंश सहाय]

वहां दो उग सकें। पर कल श्री सिंह ने कहा कि यह सब राजनीति है। यदि यह राजनीति है, तो श्री सिंह चाहे कुछ भी कहें हम उसी राजनीति पर अड़े रहेंगे, अधिक बंद बनाने की राजनीति पर। जैसा कि हमारे मुख्य मंत्री ने कुछ ही दिन पहले कहा था, आदिवासियों के प्रत्येक गांव में एक बांध होना चाहिये, जिससे वह अपने खेतों की सिंचाई कर सकें, क्योंकि आदिवासियों की समस्या उनकी आर्थिक दीनता है। उनके यहां उद्योग तथा कलें एकदम नहीं लग सकतीं। पर यदि उनके लिये बांध बना दिये गये तो उनके पास खेती के लिये काफी पानी मिल सकता है। यदि हम ऐसा करेंगे तो आप देखेंगे कि दस वर्ष में ही इनकी हालत आज से बिल्कुल भिन्न हो जायेगी। हम यह दावा नहीं करते कि हमने उनके लिये बहुत कुछ कर दिया है, किन्तु हम प्रांत में जो कुछ करते हैं, उसके विषय में हमारा दावा है कि हम इस समस्या का हल धीरे-धीरे कर रहे हैं।

हमने केवल बांध ही नहीं बनाये हैं, हमने आदिवासियों के बीच में से साहूकारों को निकालने के उपाय किये हैं। हमने आदिवासी बालकों के लिये छात्रावास खोले हैं—तीन वर्षों में 52 छात्रावास। सिंचाई के बांधों के लिये हमने एक करोड़ खर्चा किया है, यद्यपि शेष बिहार के लिये 50 लाख या कम ही खर्चे होंगे। असल में वहां लोग शिकायत सी करते हैं, यद्यपि उनका यह मतलब नहीं होता, पर वे मजाक में कहते हैं कि सब कुछ आदिवासियों के ही लिये है, जब आदिवासियों का प्रश्न होता है तो वित्त मंत्री भी अपनी मुट्ठी ढीली कर देता है, राजस्व मंत्री को आदिवासियों के उत्थान की चिन्ता अन्य समस्याओं से अधिक है। हम आपसे यही प्रार्थना कर सकते हैं कि हमें कुछ समय दीजिये, और हमने यह दस वर्ष का समय रखा है जिससे कि इस कालावधि में हम शीघ्रता से कार्य कर सकें और अपनी प्रगति में ढील न करें, अन्यथा हम यह सोच सकते हैं कि आदिवासी रक्षण प्राप्त कर लेंगे और इसलिये हमें उन्हें ऊंचा उठाने के कार्य में शीघ्रता करने की आवश्यकता नहीं है। कल यह कहा गया था कि पौराणिक युग से, जब से आर्य इस देश में आये, तब से हमने आदिवासियों की उपेक्षा ही की है और उनके लिये कुछ नहीं किया है। मैं केवल यही कह सकता हूं कि गत पचास वर्षों में, ब्रिटिश शासनकाल में, उन्होंने इतना कार्य नहीं किया था, जितना हमारा दावा है कि हमने तीन वर्ष में किया है। श्रीमान, मेरे वे मित्र महोदय, जो कल हमारी आलोचना में इतने वाचाल थे, क्या कर रहे थे। वे ब्रिटिश शासन में क्या कर रहे थे? सैनिक भर्ती कर हरे थे, जबकि हम आदिवासियों के लिये लड़ रहे थे। अब भी यदि मैं...

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्य से कहना चाहता हूं कि वे इस विषय में अधिक विषयान्तर न करें।

***श्री जदुबंश सहायः** शिरोधार्य है, श्रीमान! अब भी किसी को दोष न देते हुए मैं केवल यही कहूंगा कि यदि सरकार केवल शीघ्रता से आगे बढ़े, तो तीन

वर्ष में ही हम आदिवासियों के लिये आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं। केवल दिल चाहिये और धन चाहिये। बिहार एक निर्धन प्रान्त है; किन्तु अपनी गरीबी के बावजूद भी, बिहार भारत का निर्धनतम प्रान्त होते हुए भी, हम यह दावा कर सकते हैं कि ब्रिटिश शासन में, वरन् हमारे 1937 के शासन-काल में जितनी उन्नति हुई थी, उससे अधिक उन्नति हमने अब की है। अत: मैं अपने मित्रों से प्रार्थना करता हूं कि हमें ये दस वर्ष दे दीजिये। दस वर्ष का समय हमारे लिये परीक्षा काल होगा। यह आदिवासियों की परीक्षा नहीं है, छोटा नागपुर के लोगों की या भारत के किसी अन्य भाग के दलित वर्ग की परीक्षा नहीं है, यह दूसरे लोगों की परीक्षा है। यह हमारे लिये चुनौती है। यह भारत के सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिये चुनौती है और हम उस चुनौती को स्वीकार करते हैं। हम आपसे यही प्रार्थना करते हैं कि हमें यह दस वर्ष का समय दीजिये।

***श्री बी.एल. सौंधी** (पूर्वी पंजाब: जनरल): प्रश्न पर मत लिये जायें।

***अध्यक्ष:** समाप्ति प्रस्ताव पेश हो चुका है। प्रश्न यह है:

"कि प्रश्न पर मत लिये जायें।"

प्रस्ताव स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** डॉक्टर अम्बेडकर।

***माननीय डॉक्टर बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई: जनरल): श्रीमान, मैं चार ही संशोधनों के विषय में कुछ शब्द कहना चाहता हूं। मैं पहले अपने मित्र श्री भार्गव के संशोधन को लेता हूं और मैं उसे स्वीकार करने के लिये तैयार हूं, क्योंकि मैं देखता हूं कि यद्यपि इस सदन में जो प्रतिवेदन पेश किया गया था, उसमें आंग्ल भारतीयों को मनोनयन द्वारा प्रतिनिधित्व देने के विषय में कोई कालावधि नहीं रखी गई थी, पर मैं देखता हूं कि उस प्रतिवेदन पर बाद में जो वाद-विवाद हुआ, उसमें मेरे मित्र पंडित भार्गव ने एक संशोधन पेश किया था जो लगभग वैसा ही था जैसा कि उन्होंने अभी पेश किया है और मैं देखता हूं कि उनका वह संशोधन सदन द्वारा स्वीकृत हो गया था। इसलिये मैं उनके इस संशोधन को भी स्वीकार करने के लिए बाध्य हूं।

आगे श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा उठाये गये प्रश्न के विषय में मेरा ख्याल है कि उसके एक भाग की मंशा तो मेरे मित्र श्री कृष्णमाचारी के संशोधन द्वारा, जिसे मैं सरकार करता हूं, पूरा हो गया है। इस समय मैं स्वयं अच्छी तरह नहीं समझता कि क्या इस खंड का यह अर्थ है कि यह कालावधि इस संविधान के आरम्भ से आरम्भ होगी या नई संसद के प्रथम निर्वाचन की तारीख से आरम्भ होगी। किन्तु इस समय तो मैं यही कह सकता हूं कि इस मामले पर मस्विदा समिति विचार करेगी और यदि आवश्यक होगा, तो वे इस प्रकार का एक संशोधन पेश करेंगे कि यह कालावधि प्रथम संसद के प्रथम अधिवेशन से आरम्भ होगी।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

मेरे मित्रों, श्री मुनिस्वामी पिल्ले और श्री मनमोहन दास ने जो युक्तियां पेश की हैं, उनके विषय में मुझे खेद है कि उस संशोधन को स्वीकार करना मेरे लिए संभव नहीं है। उनकी प्रस्थापना यह है कि वे इस खंड को विद्यमान रूप में छोड़ने के लिए तो तैयार हैं, पर वे संसद को यह शक्ति देना चाहते हैं कि वह दस वर्ष की कालावधि को बढ़ाकर इस खंड को बदल सकती है। अब हमने यह मामला सर्वप्रथम इस संविधान में रखा है और मैं नहीं समझता कि हमें इस विषय में किसी परिवर्तन की अनुमति देनी चाहिये, जब तक कि संविधान ही संशोधित न कर दिया जाये।

मैं अनूसूचित जातियों के सदस्यों द्वारा कही गई बातों के विषय में एक दो शब्द कहना चाहता हूं, जो कुछ आवेशपूर्ण और जोरदार शब्दों में इस अनुच्छेद द्वारा निश्चित सीमा के विषय में बोले हैं। मुझे कहना होगा कि उनके लिये शिकायत का कारण नहीं है, क्योंकि दस वर्ष की सीमा रखने का विनिश्चय उन्हीं की सहमति से किया गया है। मैं स्वयं अधिक समय के लिए जोर डालना चाहता था, क्योंकि मैं समझता हूं कि जहां तक अनुसूचित जातियों का सम्बन्ध है, उनके साथ अन्य अल्पसंख्यकों के समान व्यवहार नहीं होता। उदाहरण के लिए जहां तक मुझे पता है, मुसलमानों के लिए विशेष रक्षण 1892 में आरम्भ हुआ था; कहना चाहिये कि उस समय श्री गणेश हो गया था। अत: मुसलमान लगभग 60 साल तक न विशेषाधिकारों का उपयोग करते रहे हैं। ईसाइयों को यह विशेषाधिकार 1920 के संविधान में मिला था और उन्होंने 28 वर्ष तक उस का उपभोग किया है। अनुसूचित जातियों को यह विशेष रक्षण केवल 1935 के संविधान में मिला है। इस विशेष रक्षण का आरंभ कार्यरूप में 1937 में हुआ, जबकि वह संविधान लागू हुआ। उनके लिए यह दुर्भाग्य की बात है कि वे इससे लाभ केवल दो वर्ष तक उठा सके, क्योंकि वास्तव में 1939 से अब तक या 1946 तक संविधान विलम्बित रहा और अनुसूचित जातियां उन विशेषाधिकारों से लाभ नहीं उठा सकीं, जो उन्हें 1935 के अधिनियम में मिले थे, और मेरे विचार में सदन के लिए यह बिल्कुल उचित होता और उदार होता कि वह अनुसूचित जातियों को इन रक्षणों के विषय में अधिक समय दे देता। किन्तु जैसा कि मैंने कहा, यह सब सदन ने स्वीकार किया। श्री नागप्पा और श्री मुनिस्वामी पिल्ले तथा दूसरे सदस्यों ने यह सब कुछ स्वीकार कर लिया, और यदि मैं कह दूं—मैं कोई शिकायत नहीं कर रहा हूं—तो वे दूसरी ओर बोल रहे थे, और मेरे विचार में अब उपबन्धों को बदलना ठीक नहीं है। यदि दस वर्ष के अन्त में अनुसूचित जातियां यह देखें कि उनकी स्थिति सुधरी नहीं है या वे इस कालावधि को और बढ़ाना चाहते हैं, तो इसी संरक्षण को प्राप्त करने के लिये उपाय ढूंढना उनकी शक्ति या बुद्धि से परे की वस्तु नहीं होगी।

***श्री ए.वी. ठक्कर** (सौराष्ट्र): अनुसूचित आदिमजातियों का क्या कहना, जो कि उनसे भी गिरी हुई है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** अनुसूचित आदिमजातियों के लिये मैं और भी लम्बा समय देने के लिए तैयार हूं। किन्तु जो लोग अनुसूचित जातियों अथवा अनुसूचित आदिमजातियों के रक्षणों के विषय में बोले हैं, उन्होंने ऐसी बाल की खाल निकाली है कि यह चीज दस के पश्चात् समाप्त हो ही जानी चाहिए। मैं तो उन्हें एडमंड वर्क के शब्दों में यही कहना चाहता हूं कि "महान साम्राज्य तथा छोटे दिमाग एक दूसरे से मेल नहीं खाते।"

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों को एक-एक करके लेता हूं, संशोधन संख्या 39 (सूची 1–पंचम सप्ताह)।

***श्री युधिष्ठिर मिश्र** (उड़ीसा राज्य): श्रीमान, मैं अपने संधोधन को वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 40 (सूची 1-पंचम सप्ताह)।

***श्री एस. नागप्पा:** डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 99 (सूची 3–पंचम सप्ताह)।

***श्री बी.आई. मुनिस्वामी पिल्ले:** मैं 25 मई को सदन में नहीं था, जबकि अल्पसंख्यक समिति के द्वितीय प्रतिवेदन पर विचार किया गया था। किन्तु डॉक्टर अम्बेडकर ने जो कुछ कहा है, उसे ध्यान में रखते हुए मैं अपना संशोधन वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 100 (सूची 3–पंचम सप्ताह)।

***डॉ. मनमोहन दास:** मेरा संशोधन न्यायपूर्ण और उचित है। मैं उसे वापस नहीं लेना चाहता। बहुसंख्यकों की इच्छा को अल्पसंख्यकों पर थोपने दिया जाये।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित अनुच्छेद 295-क के अन्त में निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:–

'Unless Parliament by Law otherwise provides'."

संशोधन अस्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 105 (सूची 4–पंचम सप्ताह)।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मेरे संशोधन के सिद्धान्त को श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के संशोधन में स्वीकार कर लिया गया है। अत: मैं अपने संशोधन को वापस लेना चाहता हूं।

संशोधन सभा की अनुमति से वापस ले लिया गया।

***अध्यक्ष:** अगला संशोधन संख्या 119 पंडित ठाकुर दास भार्गव का है। इसे डॉ. अम्बेडकर ने स्वीकार कर लिया है।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 295-क में 'Constitution' शब्द के पश्चात् '(a)' ये कोष्ठक तथा अक्षर प्रविष्ट कर दिये जायें और 'State' शब्द के पश्चात् निम्न प्रविष्ट कर दिया जाये:—

'(b) relating to the representation of the Anglo-Indian community either in the House of the People or in the Legislative Assemblies of the States through nomination.' "

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** अगला संशोधन मस्विदा समिति का संशोधन संख्या 114 है।

प्रश्न यह है:

"कि संशोधनों पर संशोधनों की सूची 1 (पंचम सप्ताह) के संशोधन संख्या 38 में प्रस्थापित अनुच्छेद 295-क में निम्न परन्तुक जोड़ दिया जाये:

'Provided that nothing in this article shall affect the representation in the House of the People or in the Legislative Assembly of a State until the dissolution of the then existing House or the Assembly, as the case may be.' "

संशोधन स्वीकृत हो गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है कि:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 295-क संविधान का अंग बने।"

अनुच्छेद 295-क संविधान में जोड़ दिया गया।

***अध्यक्ष:** मुझे यह सुझाव दिया गया है कि मस्विदा समिति को कुछ समय मिलना चाहिये, जिससे कि वे शेष अनुच्छेदों पर विचार कर सके और यह अच्छा

होगा, यदि हम एक-दो दिन के लिये अपनी बैठकों को छोटा कर दें। अतः मेरा सुझाव है कि हम अब उठ जायें और सदन कल 9 बजे प्रातः पुनः समवेत हो।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि मस्विदा समिति को काफी समय मिलना चाहिये, जिससे कि वे हमें शेष अनुच्छेदों का पूरा नक्शा दे सकें। अन्यथा हमारे लिये समझना कठिन है। यदि वे पूरा नक्शा दे सकें, तो वह सुविधा की बात होगी और सराहनीय बात होगी।

***अध्यक्षः** केवल मस्विदा समिति के साथ ही कठिनाई नहीं है। कुछ मामलों पर और विचार करने की आवश्यकता है, जिनके विषय में सर्व सम्बद्ध लोगों ने अभी कोई विनिश्चय नहीं किया है। अतः मस्विदा समिति को जितना समय चाहिये, उससे अधिक समय देने से क्या लाभ है।

तत्पश्चात् सभा शुक्रवार तारीख 26 अगस्त, 1949 के प्रातः के 9 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———————